कुरुक्षेत्र

सितम्बर 1982

मूल्य : 1 रुपया

बीस सूत्री कार्यक्रम से गरीबी उन्मूलन को प्रोत्साहन

देश के सभी राज्यों में गरीबों की गरीबी उन्मूलन के लिए जोरदार अभियान चलाए जा रहे हैं। प्रधानमंत्री के 20 सूत्री कार्यक्रम ने इस अभियान में तेजी का दौर चालू कर दिया है। चालू वर्ष में इस कार्यक्रम के लिए 8374.48 करोड़ रुपये के परिव्यय की व्यवस्था की गई है।

देश में बेरोजगारी की समस्या बड़ी भयावह है। इस समस्या के समाधान के लिए रोजगार कार्यक्रम और ट्राइसेम (ग्रामीण युवकों के लिए रोजगार की प्रशिक्षण योजना) के अन्तर्गत सभी राज्यों में जोर-शोर से कार्य चल रहा है। स्वरोजगार के लिए लोगों को प्रशिक्षण, मार्गदर्शन, ऋण, अनुदान तथा विपणन की सुविधाएं उपलब्ध कराई जा रही हैं। जिला जन-शक्ति योजना और रोजगार सृजन परिषद् स्थापित किए जाने के अतिरिक्त रोजगार कार्यक्रमों के लिए और कई तरह से प्रोत्साहन दिए जा रहे हैं। ये कार्यक्रम महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, जम्मू और कश्मीर तथा पश्चिम बंगाल में चलाए जा रहे हैं। सभी राज्यों में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की प्रगति काफी संतोषजनक है। भूमि सुधार, गरीबी हटाओ कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग है, और सभी राज्यों में भूमि से सम्बन्धित दस्तावेजों को सुधारा जा रहा है। जोत-सीमा कानूनों को सख्ती से अमल में लाया जा रहा है और बची हुई जमीन के भूमिहीनों में वितरण की प्रक्रिया चालू है।

जहां तक उत्तर प्रदेश का सम्बन्ध है, सरकार ने चालू वित्त वर्ष में 4.5 लाख परिवारों के उत्थान के लिए 171 करोड़ रुपये की मंजूरी दी है। राज्य की छठी योजना का लक्ष्य 15 लाख परिवारों--लगभग एक करोड़ गरीबों को--गरीबी की रेखा से ऊपर उठाना है। खास तौर से अनुसूचित जातियों के लोगों के लिए 4271 कुएं और 13,500 घर बनाने की प्रक्रिया जारी है। इस वर्ष 2,700 अनुसूचित जाति-बस्तियों का विद्युतीकरण भी कर दिया जाएगा। अब तक राज्य में गरीबों के लिए 43,235 कुएं तैयार किए जा चुके हैं और 4,530 हैंड पम्प लगाए जा चुके हैं। गत वर्ष तक घर बनाने के लिए पिछड़े वर्गों के 11,77,578 परिवारों को प्लाट अलाट किए गए थे। इसके अलावा, खेती के लिए 2,32,955 एकड़ जमीन भी बांटी जा चुकी है। 3,30,113 परिवारों को ऋण तथा अनुदान उपलब्ध कराए गए हैं।

इस में शक नहीं कि केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों की ओर से पिछड़े वर्गों तथा गरीबी की रेखा से नीचे के स्तर के लोगों के लिए अनेक योजनाएं और कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं परन्तु वास्तविकता यह है कि गरीबों के उत्थान के लिए जितनी राशि नियत की जाती है उतनी उनके पास पहुंच नहीं पाती। सर्वेक्षणों से भी यही तथ्य सामने आया है। राष्ट्रीय आय के समुचित रूप से वितरण के कानून भी उनको ऊपर उठाने में सहायक नहीं होते। आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़ेपन के कारण उन्हें सामाजिक सुविधाओं का लाभ नहीं मिल पाता। अतः जरूरी है कि गरीबों की गरीबी उन्मूलन की ऐसी योजनाएं तैयार की जाएं जो खास तौर से उन्हीं के लिए हों और उनको अमल में लाने का काम ऐसे लोगों को सौंपा जाए जो उनके प्रति सहानुभूति रखते हों, ईमानदार हों और अपने कर्त्तव्य के प्रति निष्ठावान हों। □

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत व्यापार व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार: सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मन्त्रालय 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

एक प्रति 1 रु० वार्षिक चन्दा 10 रु०

व्यापार व्यवस्थापक: एस० एल० जायसवाल

सहायक व्यापार व्यवस्थापक : एल० आर० बत्रा

सहायक निदेशक (उत्पादन) : के० आर० कृष्णन

दूरभाष : 382406

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : राधे लाल

आवरण पृष्ठ : परमार

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास का प्रमुख मासिक

वर्ष 27 **भाद्रपद–आश्विन 1904** **अंक 11**

इस अंक में **पृष्ठ संख्या**

समन्वित ग्रामीण विकास और उसके विभिन्न पहलू 2
डा० एस० के० राव
बीस सूत्री कार्यक्रम तथा सहकारी हथकरघा उद्योग 4
वी० एन० धवन
20 सूत्री कार्यक्रम और योजना प्राथमिकताओं पर विशेष बल 6
ग्राम विकास तथा समाज कल्याण के परिप्रेक्ष्य में भूमि सुधार कार्यक्रम 7
जी० डी० अग्रवाल
बांसखेड़ी का बंजर इलाका जिसे पंजाबी किसानों ने हरियाली से भर दिया 10
एन० पी० चौबे
तमिलनाडु में रोजगार के साधन 12
सतीश कुमार जैन
जनजाति विकास की दिशा में बढ़ते कदम 14
डा० भूपिन्दर सिंह
धरती मां रूठ गई तो (लघु कथा) 15
राजेन्द्र परदेसी
अरावली के अंचल में नए जीवन की हलचल 16
जगमोहन लाल माथुर
गांवों के लोगों के लिए संतुलित पोषक आहार 19
ब्रजलाल उनियाल
अपना भारत देश (कविता) 22
राज ठाकुर 'सागर'
परिवार कल्याण : कुरान शरीफ की रोशनी में 23
शहुद आलम शहुद
उधार खरीदे जो, कांटे बोवे वो 24
राकेश कुमार अग्रवाल
महाराष्ट्र में खरीफ के मौसम में कृषि उत्पादन 26
सहकारी क्षेत्र में चीनी उत्पादन को अधिक प्रोत्साहन दिया जाए 27
आर० सी० भटनागर — टी० आर० सिंह
1982-83 की योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 21082 करोड़ रुपये की व्यवस्था 30
केन्द्र के समाचार 31
फसल के साथ पेड़ उगाइए : अधिक धन पाइए आवरण पृष्ठ—3

समन्वित ग्रामीण विकास और उसके विभिन्न पहलू

डा० एस० के० राव

सर्वत्र इस बात पर बल दिया जाता है कि विकासशील देशों की गरीबी बहुत कुछ देहातों की गरीबी से उपजी है। इस समय समस्या यह है कि समरस आर्थिक विकास और गांव वालों का कल्याण हो। लेकिन इसमें अन्य देशों की भांति भारत में बड़ी-बड़ी कठिन और जटिल समस्याएं निहित हैं।

भारत की कुल आबादी अर्थात् 68 करोड़ 40 लाख का 76.3 प्रतिशत भाग गांवों में रहता है। देहातों की आबादी 52 करोड़ 50 लाख है। कितनी बड़ी आबादी है यह! कोई 3 करोड़ 30 लाख ग्रामीण परिवार या तो भूमिहीन हैं या 1 एकड़ से भी कम भूमि उनके पास है। आबादी की दृष्टि से इन परिवारों की जन-संख्या कोई 16 करोड़ होगी। इनमें से 8 करोड़ को निपट नंगे-भूखों की श्रेणी में रखा जा सकता है। इन जटिलताओं को देखते हुए कहा जा सकता है कि गांववालों की दशा सुधारने के लिए कोई नपा-तुला नुस्खा नहीं है। उसके लिए अलग-अलग उपायों की जरूरत है।

खाद्यान्नों की आर्थिक विवशताओं ने देहाती क्षेत्रों की विकास नीति को एक मोड़ दिया है। सघन कृषि जिला कार्यक्रम ने उन स्थानों में जहां समुचित संसाधन उपलब्ध हो सकते हैं, आदानों और सेवाओं के समूहीकरण से कृषि उत्थान के झंडे को ऊंचा किया है।

इस दिशा में जरूरी तकनीकी ज्ञान और सहायक आदानों का भारी महत्व है। इस कारण उपसीमांत कृषि समुदाय, भूमिहीन कृषि श्रमिक, दस्तकार तथा अन्य सुविधाहीन कमजोर तबके का बहुत बड़ा वर्ग एस० एफ० डी० ए० की कोशिशों का अधिक लाभ नहीं उठा सका है।

हाल की सभी नीतियों की टेक यही रही है कि इन सुविधाहीन देहाती जनों की खास-तौर पर उनकी, जो गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे हैं, गरीबी को मिटाने के लिए कोई अलग उपाय किया जाना चाहिए। गरीबी की रेखा को मापने के लिए कई तरीके हो सकते हैं लेकिन कहा जाता है कि लगभग 45 से 49 प्रतिशत गांव वाले परिभाषित गरीबी रेखा से नीचे हैं। चालू समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम उनकी ओर विशेष ध्यान दे रहा है।

इस संबंध में दूसरा तथ्य यह है कि कल्याण संबंधी मूल आवश्यकताएं पंच-वर्षीय योजनाओं के अनेक समाज सेवा क्षेत्रों से पूरी की जा रही हैं। ग्राम विकास की तीसरी विशेषता यह है कि लोगों के विकास की किस्म को इस प्रकार उन्नत किया जा रहा है कि साझेदारी की भावना आए, सामाजिक एकक बनाए जाएं और स्वेच्छा-प्रेरित विकास प्रक्रिया हो। वास्तव में ग्राम विकास की प्रगति का रहस्य यह है कि उसके लिए उत्पादन, न्यूनतम सामाजिक जरूरतों और मानवीय संसाधन के विकास की त्रिवेणी का संगम होना चाहिए। यदि उत्पादन बढ़ाना है तो कृषि की संरचना को उन्नत करके उसे पुष्ट करना होगा। आदानों का भरपूर लाभ उठाना होगा और भूमि का अधिकतम उपयोग करना होगा। प्रति आदान उत्पादकता में अब सराहनीय वृद्धि करनी होगी। योजना को कार्यरूप देने में इस बात का खास ध्यान रखा गया है।

जहां तक विकास के तौर-तरीकों का संबंध है, उत्पादन वृद्धि का लक्ष्य एक महत्व-पूर्ण लक्ष्य है। सिंचाई कमान क्षेत्रों के विकास कार्यक्रम से पता चल गया है कि बड़ी-बड़ी सिंचाई परियोजनाओं के अधीन उपलब्ध समग्र जल का प्रभावी सदुपयोग किस प्रकार किया जाना चाहिए।

भूमि सुधार

भूमि सुधार विधानों का उद्देश्य यह है कि समतावाद का सामाजिक उद्देश्य तो पूरा हो ही साथ ही साथ उत्पादन में वृद्धि हो। कृषि सुधार के प्राकृतिक संसाधनों के सम्यक् बंटवारे में कुछ बड़ी अड़चनें थीं जैसे सामन्तवादी पट्टेदारी व्यवस्था, भूमि का अनुचित वितरण, लगान की ऊंची दरें, और जोतों के छोटे-छोटे टुकड़े। बिचौलियों को तो अब प्रायः समाप्त ही कर दिया गया है। लगान की दरें और दमनकारी भूमि व्यवस्था को ठीक-ठाक कर दिया गया है। कुछ अन्य उपलब्धियां भी हैं पर आंशिक हैं। जहां कुछ लोग सन्देह और निराशा व्यक्त करते हैं वहां कहा जा सकता है कि देहातों की कायापलट की दिशा में प्रगति हुई है।

उत्पादन का एक और महत्वपूर्ण आधार कर्ज है। कर्ज मिलेगा तो काम चलेगा नहीं तो उत्पादन ठप्प। किसानों की शोचनीय दशा में महाजनों की सूदखोरी का भारी हाथ रहा है। यदि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को उठाना है, तो किसान को खेती के लिए आसान शर्तों पर और समय पर कर्ज मिलना ही चाहिए। अब इस क्षेत्र में वाणिज्यिक बैंक आदि कूद पड़े हैं। वे छोटे और बड़े पैमाने पर ऋण दे रहे हैं। यह 1980 के दशक

की एक महान उपलब्धि है। समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम की वित्त प्रबन्धन पद्धति की खास बात यह है कि देहाती कार्यक्रमों को चलाने के लिए वाणिज्यिक ऋण उपलब्ध कराया गया है। कृषि पुनर्वित्त प्रबन्धन तथा विकास निगम ने आंशिक रूप से पुनर्वित्त प्रबन्धन तथा सहकारी ऋण के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवा की है।

लेकिन बैंकों का यह कार्य पर्याप्त नहीं है। अब भी ऐसे निराशाजनक अनुभव होते हैं कि बैंक से समय पर कर्ज नहीं मिल पाता। फिर से अदायगी की क्षमता तभी पैदा होती है जब उत्पादन बढ़े। सरकारी प्रक्रिया में इस पहलू पर आमतौर पर ध्यान नहीं दिया जाता। इसलिए बैंक बड़बड़ाते रहते हैं। उनकी भारी रकमें फंस जाती हैं और वे ऋण के चक्र को नहीं चला सकते। असली समस्या यह है कि परियोजना स्तर पर समन्वय हो और कार्यान्वियन के स्तर पर उसका पीछा।

समन्वित ग्राम विकास का दूसरा मुख्य आधार यह है कि ग्राम समुदाय की मूल जरूरतों को जुटाया जाए। ये हैं, शिक्षा एवं प्रौढ़ शिक्षा, स्वास्थ्य और सफाई, पेय जल की सप्लाई, गांवों को बिजली, गांव में सड़क, आवास और पौष्टिक आहार। योजना काल में इन पर नियोजन 4200 करोड़ से भी अधिक का है। इन सरकारी नियोजनों की जरूरत है ताकि सड़क जैसे आधार ढांचे का सदुपयोग करके परिवार की अर्थ-व्यवस्था में सुधार लाया जाए और साथ ही समाज सेवा के सहयोग से उनके रहन-सहन को सुधारा जाए। ग्राम पुनरुत्थान तभी हो सकेगा जब इन न्यूनतम आवश्यकताओं का समुचित प्रबन्ध हो।

मानवीय संसाधन विकास

समन्वित ग्राम विकास की तीसरी प्रमख सीढ़ी है, मानव संसाधन का विकास। बहुत से लोगों ने ठीक ही कहा है कि तकनीकी ज्ञान अथवा आवश्यक आदान की सप्लाई तभी सफल हो सकती है जब लोग स्वयं रुचि लें और समुदाय के रूप में स्वेच्छा से संगठन बनाएं। अनेक सामाजिक समूह बन गये हैं जैसे महिला मंडल, यूथ क्लब, चर्चा मंडल, किसान सभा, ग्राम सभा, विकास वाहिनी। इस बीच उनका प्रभाव लोगों की जागृति, भावनाओं और तौर-तरीकों पर पड़ा है। इसके अलावा, स्वैच्छिक कार्य-दलों ने अनेक प्रकार आत्म सहायता को भी जगाया है।

इस क्षेत्र में स्वैच्छिक एजेंसियों की लम्बी सूची में एक नया नाम जुड़ा है बड़े-बड़े औद्योगिक घरानों का। कर में छूट से प्रेरित होकर वे ग्रामीण क्षेत्रों में जा पहुंचे हैं। उनमें से अधिकांश समाज कल्याण कार्य में रत हैं और अभी तक ग्रामवासियों को औद्योगिक प्रबन्ध अनुभव नहीं दे सके हैं। विकास प्रक्रिया में लोगों की रुचि जगाने में इसे अनेक अंशों में सफलता मिली है। समन्वित ग्राम विकास के लक्ष्य की पूर्ति में सर्वाधिक महत्व मानवीय पूंजी के जुगाड़ का है।

समन्वित ग्राम विकास में तीन बातों का संगम अत्यावश्यक है जैसे मानवीय तत्व, आधार ढांचा, और उत्पादन। यह एक विषयपूरक समन्वय है। इस समन्वय का मुख्य पात्र कमजोर वर्ग और वे लोग हैं जो गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे हैं। चालू समन्वित ग्राम विकास का लक्ष्य है कि प्रति वर्ष प्रत्येक खंड के कम से कम 600 परिवारों को सहायता दी जाए और छठी योजना के दौरान सभी 5000 खंडों को। लघु कृषक विकास कार्यक्रम में गरीब का पता लगाने की गतिविधि में न केवल कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्र ही हैं बल्कि उद्योग, सेवा और व्यापार के क्षेत्र भी आते हैं। गरीबी का एक कारण बेरोजगारी भी है। देहातों में सारे साल रोजगार नहीं मिलता। कृषि उत्पादन सघन हो गया है। कुछ इलाकों में तीन-तीन नहीं तो दो-दो फसल तो ली ही जाने लगी हैं फिर भी बेरोजगारी पर विजय नहीं पाई जा सकी है। जब सफल का मौसम नहीं रहता, उस समय जिन्हें रोजगार चाहिए, उसके लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम मजदूरी के बदले अनाज देता है। यह एक खास कार्यक्रम है। इस समय खादी और ग्रामोद्योग 29 लाख लोगों को रोजगार देता है। चालू योजना अवधि में विशेष प्रयासों से यह संख्या 50 लाख तक पहुंच सकती है। देहातों के जो नवयुवक स्वरोजगार के लिए हुनर प्राप्त करना चाहते हैं, उनके लिए स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम संस्थाओं में उन्हें अवसर देता है। सरकारी योजनाएं भी होती हैं। आर्थिक सहायता दी जाती है ताकि वह अपने निज के लाभकारी धंधे स्थापित कर सकें। कमजोर वर्गों की ओर खास ध्यान दिया जाता है। उनकी रुचियों और आर्थिक संभावनाओं को परखा जाता है। स्थानीय संसाधनों और संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए समुचित व्यवसायों की खोज की जाती है, आवश्यकतानुसार परियोजनाएं तैयार भी की जाती हैं।

गांवों की कायापलट की कोई एक रामबाण औषधि नहीं है। ग्राम विकास को सामान्य राष्ट्रीय आर्थिक विकास की मुख्य धारा से अलग नहीं किया जाना चाहिए। मुख्य लक्ष्य यही है कि ग्रामवासियों का उत्तरोत्तर-आर्थिक विकास हो, उनका एक सुसम्बद्ध समाज हो और उनमें कम से कम विशेषताएं हों। □

रूपान्तर :—

आर० एन० सिंह,
प्रधान संपादक,
212, संसदीय सौध,
नई दिल्ली-1

छोटा परिवार सुखी परिवार

बीस सूत्री कार्यक्रम तथा सहकारी हथकरघा उद्योग

वी० एन० धवन

देश को आर्थिक एवं सामाजिक असमानता को दूर करने के लिए सर्वप्रथम 'गरीबी हटाओ आन्दोलन' के साथ ही साथ 20 सूत्री आर्थिक कार्यक्रम लागू किया गया। इस कार्यक्रम के क्रियान्वियन होने के परिणाम स्वरूप देश में बेरोजगारी में कमी, उत्पादन में बहुलता के कारण वस्तुओं के दामों में भारी कमी आने लगी थी। देश के निर्बल वर्गों में भी आशा की किरण प्रस्फुटित होने लगी थी। इस प्रकार आर्थिक सुदृढ़ता जैसे ही अपना कदम बढ़ाने वाला ही थी कि राजनीति के विचारों में एक आंधी आयी और समस्त किया गया प्रयत्न उस झन्झावात में खो गया।

इस देश का प्रारम्भ से ऐसा इतिहास रहा है कि जब भी आर्थिक, सामाजिक तथा धार्मिक असमानता अधिक बढ़ जाती है तब इस असमानता को दूर करने के लिए एक ऐसे व्यक्ति के हाथ में देश की बागडोर दे दी जाती है जो इन असमानताओं को दूर करके लोगों में नई चेतना एवं उत्साह भर दे। आज पुनः देश की आर्थिक विकास एवं वस्तुओं की कीमतों में स्थायित्व तथा बेरोजगारी दूर करने के उद्देश्य से प्रधानमंत्री ने नए 20 सूत्रीय कार्यक्रम की घोषणा की है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 18वें परिच्छेद में कुटीर उद्योग में लगे कारीगरों, विशेष रूप से हथकरघा उद्योग के सर्वतोमुखी विकास के लिए प्रावधान किया गया है।

यह तो विदित ही है कि कृषि उद्योग के पश्चात् हथकरघा उद्योग ही ऐसा उद्योग है जो न्यूनतम लागत पर अधिकतम रोजगार के साधन उपलब्ध करता है तथा तन ढकने के लिए कपड़े और विदेशी मुद्रा अर्जित करने के लिए साधन संयोजित करता है। आज भारत वर्ष में लगभग 30.21 लाख हथकरघे हैं जिस पर 1740 करोड़ रुपये का सूती वस्त्रों तथा 131 करोड़ रुपये का रेशमी वस्त्रों का उत्पादन हो रहा है। इसमें से 261 करोड़ रुपये का कपड़ा निर्यात करके विदेशी मुद्रा अर्जित की जा रही है। परन्तु देश की गरीबी की रेखा के नीचे के स्तर पर जी रहे 30 करोड़ 20 लाख व्यक्तियों में से 25 करोड़ 10 लाख व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्र में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इनमें प्रमुखतः भूमिहीन मजदूर, लघु एवं सीमान्त कृषक, ग्रामीण शिल्पकार एवं बुनकर तथा आदिवासी हैं। इसमें भी प्रमुखरूप से बुनकर कारीगर ही हैं। एक बुनकर कारीगर जो अपने परिवार के साथ 8–10 घन्टे प्रतिदिन काम करके 8 रु० या 10 रु० रोज कमाते हैं, जिसकी औसत मजदूरी प्रति व्यक्ति एक रुपया 50 पैसे पड़ती है। ऐसी स्थिति में सुरसा के समान विकराल मुख फैलाये हुई महंगाई में इस अल्प धनराशि में कैसे वे जीवित रह सकते हैं। आखिर इस निर्धनता के स्तर के नीचे जीवन व्यतीत करने का कारण क्या है? इसमें दो कारण हो सकते हैं:—प्रथम या तो इनके श्रम का उत्पादन बहुत ही कम होता है या इनके श्रम का उचित मूल्य बाजार में नहीं मिल पाता। दूसरा कारण ऐसे ढांचे का अभाव है जो इनको कच्चा माल, वित्त की सुविधा, विपणन की सुविधाएं आदि पर्याप्त मात्रा में तथा उचित समय पर नहीं दे पाता। एक यह भी कारण हो सकता है कि जो साधन सरकार द्वारा उनकी सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति के लिए उपलब्ध कराए भी गए वे समाज के शक्तिशाली वर्गों द्वारा हड़पे जाते रहे हैं आचार्य विनोबा जी का कथन इस स्थान पर सत्य ही उतरता है "गरीबों को जो सहायता पहुंचाना चाहते हैं, वह गरीबों तक पहुंच ही नहीं पाती। सहायता उन्हीं को पहुंचती है जो सहायता की रस्सी में जोर लगाकर उसे अपनी ओर खींच लेते हैं। जो भी सहायता ऊपर से आती है चाहे वह कम हो या ज्यादा क्यों न हो केवल ऊपर के लोगों तक ही सीमित रह जाती है।"

उपर्युक्त कथन हथकरघा उद्योग पर अक्षरशः लागू होता है। एक कल्याणकारी शासन के नाते इनकी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए सरकार ने 25 सघन हथकरघा विकास परियोजनाएं जिनमें एक लाख से अधिक हथकरघे हैं तथा 21 निर्यात उत्पादक परियोजनायें, जिनमें 10,000 करघों का उत्पादन प्रतिवर्ष रखा गया है, देश के विभिन्न स्थानों में स्थापित की गई है। साथ ही साथ महाजनों द्वारा शोषण से मुक्ति दिलाने एवं सरकार द्वारा दी गई अनेक प्रकार की वित्तीय सहायता सीधे बुनकरों तक पहुंचाने के लिए सहकारिता का माध्यम अपनाया गया। 1979 के आंकड़ों के अनुसार देश में 38 लाख हथकरघे थे जिनमें 12.07 लाख करघे सहकारी क्षेत्र में थे। 15026 सहकारी बुनकर समितियों का गठन किया गया था।

इसके साथ ही निहित स्वार्थों के कारण 15026 समितियों में से केवल 9357 ही सहकारी समितियां सक्रिय रह पायीं और 12,68,424 करघों के स्थान पर केवल 8,55,991 करघे ही उत्पादन में रहते रहे।

एक बुनकर के चाहे वह व्यक्तिगत क्षेत्र में हो या सहकारी क्षेत्र में उसकी समस्याएं निम्न प्रकार की रहती हैं।

1. कच्चे माल का पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होना
2. वित्त की समस्या
3. तकनीकी समस्या
4. विपणन की समस्या
5. प्रीलूम तथा पोस्टलूम सुविधाओं का अभाव

इन समस्याओं का निराकरण कराने के लिए प्रधानमन्त्री ने अपने 20 सूत्रीय कार्यक्रम में विशेष स्थान दिया। फलस्वरूप इस दिशा में निम्नलिखित कार्य हो रहे हैं:—

1. राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा मुहैय्या की गई वित्तीय सुविधा से ऐसे राज्यों में सहकारी सूत मिल की स्थापना करना जहां यह पहले से नहीं थी जैसे बिहार में रांची। जहां सूत मिलें हैं वहां तकुओं की संख्या अधिक कर उत्पादन को बढ़ावा देना जिससे उचित दाम एवं पर्याप्त मात्रा में बुनकरों को सूत उपलब्ध हो सके।
2. निष्क्रिय बुनकर सहकारी समितियों के पुनर्गठन की योजना जिससे निष्क्रिय समितियों का सक्रिय समितियों के साथ एकीकरण करके समितियों के आकार को बढ़ाया जा सके।

3. समितियों में आर्थिक सुदृढ़ता लाने के लिए सरकार द्वारा 90 रु० अंश पूंजी ऋण के स्थान पर सदस्यों को 180 रु० अंश पूंजी ऋण के रूप में दी गई है। इससे समितियों में अंश पूंजी बढ़ी और वे सहकारी अधिकषों से कार्यशील पूंजी के लिए अधिक सक्षम हो गईं।

4. अनेक प्राथमिक बुनकर सहकारी समितियों में और अधिक आर्थिक सुदृढ़ता लाने के लिए सरकार ने दस-दस हजार रु० अंशभागिता के रूप में दिए।

5. समितियों की प्रबन्ध व्यवस्था के लिए 300 रु० प्रतिमाह वेतन का प्रबन्धक सह सचिव प्रत्येक समिति को तीन साल तक देने का आदेश प्रसारित किया गया है।

6. देश के पूर्वी उत्तरी क्षेत्र तथा आदिवासी तथा पर्वतीय क्षेत्र में बुनकरों को नई डिजाइनों एवं आधुनिक लूम से परिचित कराने के लिए 9 नए बुनकर सर्विस सेन्टरों की स्थापना की गई है। इसके अतिरिक्त गोहाटी में हथकरघा तकनीकी संस्थान स्थापित करने की योजना भी है।

7. कुछ क्षेत्रों में जहां बुनकरों के पास करघे नहीं हैं, उनको करघे की सहायता दी जा रही है जिससे वे सहकारी बुनकर समितियां बना सकें।

8. कई स्थानों में जहां बुनकर अधिक संख्या में हैं नकर कालोनी बनाने की योजना लागू की गई है।

9. पिछड़े हुए क्षेत्रों में बुनकरों को प्रीलूम तथा पोस्टलूम की सुविधा दिलाने हेतु छोटी इकाईयों के रूप में कई स्थानों में प्रक्रियात्मक इकाईयां स्थापित की जा रही हैं।

10. बुनकरों की विपणन समस्याओं को सुलझाने हेतु अखिल भारतीय हैण्डलूम फैबरिक मार्केटिंग को-आपरेटिव सोसाईटी को विशेष रूप से आर्थिक सहायता तथा निर्देश दिए गए हैं कि वे प्राथमिक बुनकर सहकारी समितियों द्वारा उत्पादित माल का अधिक मात्रा में शो रूम खोलकर बेचने का प्रबंध करें।

11. रिजर्व बैंक आफ इंडिया को आवश्यक निर्देश दिए गए हैं कि वे सहकारी बुनकर समितियों को या जो बुनकर स्टेट हैण्डलूम कारपोरेशन के अन्तर्गत आती हैं, उनको रियायती शर्तों पर अधिक से अधिक ऋण देने का प्रबन्ध करें।

12. हथकरघा वस्त्रों का निर्यात बढ़ाने के लिए आवश्यक कदम उठाए जा रहे हैं।

उद्योग	उत्पादन (मिलियन मीटर)		मूल्य (करोड़ रुपयों में)		रोजगार में लगे हुए व्यक्तियों की संख्या (लाखों में)		निर्यात (करोड़ रुपयों में)	
	1973–74	79–80	73–74	79–80	1973–74	79–80	1973–74	79–80
हथकरघा	2100	2900	840	1740	53.10	61.50	77	26
रेशम वस्त्र	29	48	63	131	12.00	16.00	14	49
पावर लूम	2400	3450	1980	3250	10.00	11.00	—	—

इस प्रकार 20 सूत्रीय कार्यक्रम के साथ ही साथ छठी पंचवर्षीय योजना में हथकरघा उद्योग की प्रगति का निम्नलिखित लक्ष्य रखा गया है।

उद्योग	उत्पादन का लक्ष्य		रोजगार की उपलब्धि	निर्यात	वित्तीय सहायता	
	(मिलियन मीटर में)	मूल्य (करोड़ रुपये में)	संख्या लाखों में	(करोड़ रुपयों में)	राज्य द्वारा (करोड़ रु०)	केन्द्र द्वारा (करोड़ रु०)
हथकरघा	4100	2460	87.00	370	190.93	120.00
रेशम वस्त्र	90	245	21.50	100	133.56	31.00
पावरलूम	4300	4100	14.00	—	3.15	1.00

उपर्युक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि भारत सरकार तथा राज्य सरकारें बुनकरों की आर्थिक तथा सामाजिक दशा सुधारने के लिए बराबर कटिबद्ध हैं। वह अब दिन दूर नहीं जब ये लोग भी समाज के अन्य लोगों की भांति अपना जीवन अच्छी प्रकार व्यतीत कर सकेंगे। इनके बच्चे भी जो आज करघे पर बैठकर काम कर रहे हैं। वे स्कूलों में जाकर शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे। इनकी स्त्रियां जो दिन रात करघों पर लगकर दो समय रोटी के प्रबन्ध की चिन्ता में लगी रहती है, वे भी कुछ राहत की सांस ले सकेंगी। □

20 सूत्री कार्यक्रम और योजना प्राथमिकताओं पर विशेष बल

योजना मंत्री का संसदीय सलाहकार समिति में भाषण

चालू वर्ष के दौरान नए 20 सूत्री कार्यक्रम के लिए 8374.48 करोड़ रुपये के परिव्यय की व्यवस्था की गई है। परन्तु छठी योजना की शेष दो वार्षिक योजनाओं को अन्तिम रूप देते समय परियोजनाओं की बढ़ती हुई लागत को ध्यान में रखा जाएगा। यह जानकारी योजना मन्त्री, श्री एस०बी० चव्हाण ने आज यहां अपने मन्त्रालय से सम्बद्ध संसदीय सलाहकार समिति की बैठक में दी।

श्री चव्हाण ने छठी योजना के उद्देश्यों को पूरा करने की आवश्यकता पर बल दिया है। इस संदर्भ में, उन्होंने कृषि उत्पादन, औद्योगिक विकास और विद्युत उत्पादन की दर में तेजी से हुई वृद्धि की जानकारी दी और छोटे परिवार को अपनाने को राष्ट्रीय स्तर पर उच्च प्राथमिकता देने पर बल दिया है।

बेरोजगारी की समस्या का जिक्र करते हुए मन्त्री महोदय ने कहा कि 462.60 लाख लोगों के लिए रोज़गार के अवसर उपलब्ध कराए जाने की आवश्यकता है। छठी योजना के दौरान 340 लाख लोगों को रोजगार उपलब्ध कराए जाने का अनुमान है। उन्होंने कहा कि संगठित क्षेत्र में प्रति वर्ष आठ लाख लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है। इसलिए स्व-रोजगार को प्रोत्साहन देने के लिए विशेष प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। श्री चव्हाण ने बताया कि छठी योजना में अपने रोजगार में लोगों को प्रशिक्षण, मार्गदर्शन, ऋण और विपणन सुविधा की सहायता उपलब्ध कराने का सुझाव दिया गया है। राज्यों को जिला जनशक्ति योजना और रोजगार सृजन परिषद् स्थापित किए जाने के अतिरिक्त रोजगार कार्यक्रमों के लिए प्रोत्साहन दिया जा रहा है। ये कार्यक्रम महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, जम्मू और कश्मीर तथा पश्चिम बंगाल में चलाए जा रहे हैं।

पिछड़े क्षेत्रों के विकास का जिक्र करते हुए मन्त्री महोदय ने कहा कि इन क्षेत्रों का विकास करने के लिए विशेष बाधाओं को ध्यान में रखते हुए केन्द्र ने राज्यों को अपने प्रयासों में तेजी लाने के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता मुहैया करायी है। छठी योजना में केन्द्रीय सहायता प्राप्त योजनाओं में पश्चिमी घाट क्षेत्र सहित पर्वतीय क्षेत्र (560 करोड़ रुपये), जन-जाति क्षेत्र (470 करोड़ रुपये) सूखाग्रस्त क्षेत्र (175 करोड़ रुपये), मरुस्थल क्षेत्र (150 करोड़ रुपये) और पूर्वोत्तर क्षेत्र (340 करोड़ रुपये) शामिल हैं।

समय और लागत में वृद्धि

बड़ी और मझौली सिंचाई परियोजनाओं की लागत में वृद्धि और विलम्ब की ओर सदस्यों ने ध्यान दिलाया। श्री चव्हाण ने उन्हें बताया कि छठी योजना की 48 बड़ी सिंचाई परियोजनाओं में 5 वर्ष या इससे अधिक का विलम्ब होने और 3। बड़ी परियोजनाओं की लागत में 500 प्रतिशत या इससे अधिक की वृद्धि का अनुमान है। मझौले स्तर की अनेक परियोजनाओं में भी अधिक धन तथा समय लगने का अनुमान है।

मन्त्री महोदय ने परियोजनाओं में लागत वृद्धि तथा देरी के कारणों का जिक्र करते हुए स्थिति को सुधारने के लिए योजना आयोग और सिंचाई मन्त्रालय द्वारा उठाए गए उपायों का उल्लेख किया। इनमें बड़ी सिंचाई परियोजनाओं की देखरेख के लिए केन्द्रीय जल आयोग में विशेष एककों की स्थापना, निर्माण सामग्री की समय पर सप्लाई सुनिश्चित करने के लिए अग्रिम योजना और राज्यों को चालू परियोजनाओं को शीघ्र पूरा करने के लिए उच्च प्राथमिकता दिए जाने की सलाह सम्मिलित है।

बिजली कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में रुकावट चिन्ताजनक है। क्योंकि इसका कृषि तथा अन्य क्षेत्रों पर प्रतिकूल असर पड़ता है। मन्त्री महोदय ने कहा कि चालू वर्ष में बिजली क्षमता में 3482 मैगावाट की वृद्धि होगी। छठी योजना में रखे गए 19666 मैगावाट के नए क्षमता लक्ष्य की तुलना में पहले तीन वर्षों के दौरान 7480 मैगावाट की और क्षमता स्थापित होने की आशा है। बाकी के 12186 मैगावाट योजना अवधि के अन्तिम तीन वर्षों के लिए हैं। परियोजनाओं के शीघ्र कार्यान्वयन के लिए हर सम्भव प्रयत्न किए जा रहे हैं। तब भी लगभग 5,000 मैगावाट क्षमता का सातवीं पंचवर्षीय योजना के पहले दो वर्षों में पूरा होने का अनुमान है। इस विफलता के कारणों में सन्यन्त्र उपकरणों की सप्लाई में देरी, कुछेक बिजली तथा परियोजना कार्यान्वयन एजेन्सियों की कमजोर प्रबन्ध व्यवस्था, सीमेंट तथा इस्पात की कमी, लागत में वृद्धि तथा अतिरिक्त साधनों की कमी के कारण आई न्यूनता प्रमुख हैं।

मन्त्री महोदय ने कहा कि गरीबी हटाओ कार्यक्रम को तेज किया गया है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की प्रगति काफी संतोषजनक है। भूमि सुधार गरीबी हटाओ कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग है। उन्होंने कहा कि राज्यों को भूमि से संबंधित दस्तावेजों के अद्यतन बनाने को कहा गया है। □

ग्राम विकास तथा समाज कल्याण के परिप्रेक्ष्य में

भूमि सुधार कार्यक्रम

जी० डी० अग्रवाल

भूमि सुधार ग्रामोत्थान का ऐसा कार्यक्रम है जिसमें कृषि मजदूरों एवं छोटे कृषकों के हितों की रक्षा होती है। प्रो० सैल्युलसन का विचार है कि "सफल भूमि सुधार के कार्यक्रमों ने अनेक देशों में साहित्यक भाषा में मिट्टी को सोने में बदल दिया है" भूमि सुधार कार्यक्रमों से ग्रामीण समाज की आय में वृद्धि के साथ ही समाज का रहन-सहन का जीवन स्तर ऊंचा हुआ है। इस प्रकार ग्रामीण समाज जो अंग्रेजी शासन काल में जीवन निर्वाह सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ था वह अब विभिन्न भूमि सुधार कार्यक्रमों के कारण सुखी जीवन के लिए अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ हुआ है।

भूमि सुधार का आशय छोटे कृषकों और कृषि श्रमिकों के लाभ के लिए भूमि स्वामित्व के पुनर्वितरण से है। भूमि सुधार के विस्तृत अर्थ में "कृषि संगठन अथवा भूधारण की संस्थागत व्यवस्था में होने वाले प्रत्येक परिवर्तन को भूमि सुधार में शामिल किया जाता है" भूमि सुधार में भूमि—स्वामित्व तथा भूमि जोत दोनों में होने वाले सुधार शामिल हैं। इस प्रकार भूमि सुधार में भूधारण प्रणाली, जोतों का आकार, कृषि पद्धति आदि वे सब परिवर्तन शामिल होते हैं जिनके अपनाने से उत्पादन में वृद्धि होती है और सामाजिक न्याय दिलाने का मार्ग प्रशस्त किया जाता है।

भारत में भूमि व्यवस्था

स्वतन्त्रता से पूर्व भारत में भूमि व्यवस्था तीन रूपों में देखने में मिलती थी, रैयतवारी, महालवारी, जमींदारी। **रैयतवारी प्रथा** के अन्तर्गत भूमि पर स्वामित्व राज्य का होता था किन्तु प्रत्येक रजिस्टर्डधारी स्वामी होता था। जब तक रजिस्टर्डधारी राज्य को नियमित रूप से कर देता रहता तब तक उसे बेदखल नहीं किया जा सकता था। उसको भूमि को काम में लेने, उसे बेचने या हस्तान्तरित करने या किसी अन्य प्रकार से उपभोग में लाने का अधिकार होता था। **महालवारी प्रथा** के अन्तर्गत सरकार पूरे वर्ष के लिए एक रकम माल गुजारी के रूप में तय कर देती थी जिसका भुगतान करने का उत्तरदायित्व गांव के सभी भूमि स्वामियों का होता था जिन्हें सहभागी कहते थे। सहभागी से राशि वसूल करने का अधिकार गांव के मुखिया को प्रदान किया जाता था। लाभ की राशि को महाल की संज्ञा दी जाती थी। **जमींदारी प्रथा** का प्रारम्भ अंग्रेजी शासकों के द्वारा किया गया। देश के ग्रामीण क्षेत्रों में कुछ व्यक्तियों को लगान वसूल करने के लिए नियुक्त किया गया जिन्हें जमींदार की संज्ञा दी गयी। जमींदार सरकारी खजाने में निश्चित धनराशि जमा करते थे। इसके बदले में जमींदारों को लगान वसूल करने का अधिकार दिया गया। इस प्रथा ने ही वास्तव में एक प्रकार से दास प्रथा को जन्म दिया क्योंकि काश्तकार हमेशा जमींदार का ऋणी बना रहता था। इस बात को स्वर्गीय प्रेमचन्द की कहानी 'सवा सेर गेहूं' सहज ही स्पष्ट करती है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् भी ग्रामीण समाज के शोषण की प्रवृत्ति, कृषि क्षेत्र से सरकारी आय में कमी, सामन्तवादी गुलामी, कृषि उत्पादन में कमी आदि दोष भारतीय ग्रामीण समाज में थे जिससे देश स्वतन्त्र होते हुए भी गुलामी की स्थिति देश में बनी हुई थी। इसीलिए भारत सरकार ने कृषि क्षेत्र में चहुमुखी विकास एवं सुधार का बीड़ा उठाया। कुछ महत्वपूर्ण कदम निम्न हैं :—

जमींदारी उन्मूलन

भूमि सुधार की दिशा में सर्वप्रथम प्रयास जमींदारों, जागींरदारों तथा बिचौलियों का उन्मूलन था जिनके पास देश का लगभग 40 प्रतिशत क्षेत्र था। सन् 1948 में मद्रास में, बम्बई, हैदराबाद में सन् 1949–50 में, बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और राजस्थान में 1952 में तथा प० बंगाल, हिमाचल प्रदेश, मैसूर और दिल्ली में 1954-55 में जमींदारी उन्मूलन अधिनियम पारित किए गए।

अधिनियम के लागू होने से लगभग 2 करोड़ काश्तकारों का राज्य सरकारों से सीधा सम्बन्ध हो गया। उत्तर प्रदेश में काश्तकार को आवासी अधिवासी, भूमिधर, सीरदार नामों से पुकारा जाता है।

काश्तकारी व्यवस्था में सुधार

काश्तकारों के हितों की सुरक्षा हेतु पट्टे की सुरक्षा लगान, नियमन, काश्तकारों के लिए स्वामित्व अधिकार जैसे उपाय किए गए। पट्टे की सुरक्षा से संबंधित अधिनियम बनाते समय तीन बातों पर ध्यान रखा गया। (1) बड़े पैमाने पर किसानों की बेदखली न की जाए। (2) भू-स्वामी को केवल खेती करने के लिए ही भूमि पुन: प्राप्त करने का अधिकार हो। (3) भूमि पुन: प्राप्त करते समय किसान के पास निश्चित न्यूनतम भूमि रहने दी जाए।

लगान नियमन के अन्तर्गत काश्तकार एक वर्ष में राज्य सरकार को कितना लगान देगा, यह निश्चित कर दिया गया

जिससे कृषक उत्पादन वृद्धि में रुचि ले सके । अधिकांश राज्यों में कुल फसल का 20 प्रतिशत से 25 प्रतिशत तक लगान निश्चित किया गया । छोटे कृषकों को लगान से मुक्त रखा गया । काश्तकार के लिए स्वामित्व अधिकार के अन्तर्गत जिन क्षेत्रों को भू-स्वामी प्राप्त नहीं कर सकते, उन क्षेत्रों के काश्तकारों को राज्यों से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार दिया गया ।

भूमि की अधिकतम सीमा का निर्धारण

भारत में कृषि का असमान वितरण होने के कारण पूरे देश में भूमि सीमा निर्धारण करने के लिए जुलाई, 1972 में समस्त राज्यों के मंत्रियों का सम्मेलन आयोजित किया गया जिसके आधार पर पूरे देश में भूमि सीमा का निर्धारण किया गया । विभिन्न राज्यों में भूमि सीमा का निर्धारण तालिका 1 में स्पष्ट किया गया है :—

तालिका—1

विभिन्न राज्यों में वर्तमान जोतों पर सीमा का स्तर

क्रमांक	राज्य	जोत सीमा (हेक्टेयर)
1	2	3
1.	आन्ध्र प्रदेश	4.05 से 21.85
2.	असम	6.74
3.	बिहार	6.07 से 18.21
4.	गुजरात	4.05 से 21.85
5.	हरियाणा	7.25 से 21.85
6.	हिमाचल प्रदेश	4.05 से 12.14
7.	जम्मू और कश्मीर	3.68 से 7.77
8.	कर्नाटक	4.05 से 21.85
9.	केरल	4.86 से 6.07
10.	मध्य प्रदेश	4.05 से 21.85
11.	उड़ीसा	4.05 से 18.21
12.	पंजाब	7.00 से 21.80
13.	राजस्थान	7.25 से 21.85
14.	तमिलनाडु	4.86 से 24.28
15.	त्रिपुरा	4.00 से 12.00
16.	उत्तर प्रदेश	7.30 से 18.25
17.	पश्चिम बंगाल	5.00 से 7.00

अप्रैल, 1981 तक भूमि सीमा अधिनियम जो 1972 के सम्मेलन में निर्णय ली गयी बातों पर आधारित है, देश में 5.8 मि० एकड़ भूमि का कुल आधिक्य है जिसमें 3.89 मि० एकड़ भूमि राज्यों द्वारा अतिरिक्त घोषित की गई । 2.58 मि० एकड़ भूमि राज्य सरकारों द्वारा अधिकार में ली गयी तथा 1.77 मि० एकड़ भूमि का वितरण कर दिया गया है । भूमि वितरण का कार्य असम, महाराष्ट्र तथा उत्तर प्रदेश में अग्रणीय है जहां हिमाचल प्रदेश में यह कार्य काफी पीछे है जो तालिका (2) से स्पष्ट होता है :—

तालिका—2

भूमि वितरण की राज्यवार स्थिति (हजार एकड़ में)

राज्य	भूमि का आधिक्य	घोषित भूमि	राज्य सरकारों का अधि-कार	राज्य सरकारों द्वारा भूमि का वितरण
1	2	3	4	5
आन्ध्र प्रदेश	1008	1008	412	287
असम	573	573	502	313
बिहार	300	238	131	131
गुजरात	90	90	21	4
हरियाणा	30	21	15	9
हिमाचल प्रदेश	286	137	134	4
कर्नाटक	400	139	68	47
केरल	150	115	77	50
मध्य प्रदेश	255	255	158	78
उड़ीसा	200	138	120	100
पंजाब	49	49	15	11
राजस्थान	794	246	221	122
तमिलनाडु	204	76	73	55
त्रिपुरा	5	2	2	1
उत्तर प्रदेश	280	280	254	223
पं० बंगाल	172	151	93	52
महाराष्ट्र	371	371	281	281

भूमि पुनर्गठन

छोटे कृषकों को अधिक लाभ प्रदान करने के उद्देश्य से भूमि पुनर्वितरण एवं पुनर्गठन की योजनाएं कार्यान्वित की गयी हैं जिनमें चकबन्दी सहकारी खेती, भूदान आन्दोलन प्रमुख हैं ।

चकबन्दी

काश्तकार के बिखरे हुए खेतों को एक स्थान पर समेकित करने के उद्देश्य से देश में ऐच्छिक तथा अनिवार्य चकबन्दी कार्यक्रम चलाए गए । आन्ध्र प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा, नागालैंड, तमिलनाडु व केरल में चकबन्दी कार्य पूरा किया जा चुका है । देश भर में 4.5 करोड़ हेक्टेयर से अधिक भूमि पर चकबन्दी कार्य किया जा चुका है ।

सहकारी खेती

भारत में सहकारिता को पहली बार 1904 में ठोस रूप दिया गया जबकि सहकारी ऋण समिति अधिनियम पारित किया गया । इसका उद्देश्य गांवों में ऋणग्रस्तता की समस्या को सुलझाना तथा ऋण समितियों की स्थापना करना था। सहकारिता के आधार पर कृषि कार्य करने के लिए सरकारी कार्यक्रम बनाए

गए। 1977–78 के अन्त में 3 लाख 1 हजार समितियां काय कर रही थीं जिनके सदस्यों की संख्या 1.31 करोड़ तथा कार्य-शील पूंजी 16691 करोड़ रुपये थी।

भूदान आन्दोलन

भूदान आन्दोलन का शुभारम्भ 18 अप्रैल, 1951 को हैदराबाद से 34 मील दूर तेलंगाना जिले के पोचमपल्ली गांव से हुआ जहां सन्त श्री विनोबा भावे को श्री वी०आर० रेड्डी नामक एक जमींदार ने 100 एकड़ भूमि दान में देने की घोषणा की। अब तक लगभग 45 लाख एकड़ भूमि इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्राप्त हो चुकी है।

ग्राम विकास में भूमि सुधारों की भूमिका

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व देश में जमींदारी प्रथा का चलन था जिसके परिणामस्वरूप भारतीय काश्तकार एक बंधुआ मजदूर मात्र था क्योंकि जमींदारों द्वारा उत्पादन का बहुत बड़ा भाग हड़प लिया गया था। जब देश स्वतन्त्र हुआ तब यह आवश्यक समझा गया कि भारतीय समाज में यदि सुधार लाना है तो ग्रामीण समाज के जीवन को आर्थिक दृष्टि से भी सुधारना होगा। देश में ग्रामोत्थान के लिये कुटीर एवं ग्रामीण उद्योग का विस्तार तथा कृषि भूमि की स्थिति में सुधार आदि कार्यक्रमों को अपनाया गया। भूमि सुधार कार्यक्रमों का ग्रामोत्थान एवं ग्रामीणों के स्तर सुधारने में एक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। कुछ महत्वपूर्ण सुधारात्मक परिणाम निम्नलिखित हैं।

जीवन स्तर में सुधार—भूमि सुधार का मुख्य कार्य भूमिहीनों को भूमि स्वामित्व दिलाना होता है जिससे स्वामित्व प्राप्त कृषक भूमि का स्थायी सुधार करता है और उत्पादन वृद्धि में सहायक होता है क्योंकि जब तक रोग की जड़ नहीं कटती है तब तक पौष्टिक पदार्थ अपना प्रभाव नहीं दिखा पाते हैं और रोगी दुर्बल बना रहता है। ठीक इसी प्रकार जब तक कृषक को खेती करने का पूर्ण स्वामित्व प्राप्त नहीं होता है तब तक वह आधुनिक बीज, खाद व आधुनिक यंत्रों का प्रयोग अनमने ढंग से करता है जिससे कृषि उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार भूमि सुधार कार्यक्रमों के परिणामों से ग्रामीण जीवन में सुधार हुआ है।

असन्तोष की भावना का निराकरण

जब प्रत्येक कृषक परिवार के पास आर्थिक जोत होती है तो आपसी मन-मुटाव कम हो जाते हैं और आपसी सहयोग का वातावरण पूरे गांव में रहता है तथा प्रत्येक कृषक कृषि कार्य को रुचि एवं लग्न के साथ करता है।

सुझाव

योजना आयोग के सदस्य श्री राज कृष्ण की अध्यक्षता में जून, 1978 को भूमि सुधार की समीक्षा समिति का गठन किया गया जिसने अपना प्रतिवेदन नवम्बर सन् 1978 को दिया तथा अनेक महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किए जो सरकार के विचाराधीन हैं। कुछ महत्वपूर्ण सुझाव संक्षेप में निम्न प्रकार दिए जा सकते हैं :—

(1) राज्यों द्वारा पारित सभी भूमि सुधार कानूनों को जिन पर राष्ट्रपति की स्वीकृति मिल चुकी है, संविधान की 9वीं अनुसूची में शामिल किया जाना चाहिए जिससे कि भूमि सुधारों को किसी भी अदालत में चुनौती न दी जा सके।

(2) यह समिति थोड़े-थोड़े अन्तर से भूमि सुधार के विभिन्न पहलुओं पर अलग-अलग रिपोर्ट देगी जिससे कि सम्बद्ध सरकारें उन पर विचार कर प्रमुख विषयों पर तुरन्त कार्यवाही कर सके।

(3) 30 जून 1978 को भूमि सुधारों को चुनौती देने वाली 27155 रिट याचिकाएं उच्च न्यायालयों में बिना निर्णय के पड़ी थीं। अतः इस कार्य के लिए न्यायालयों की संख्या में वृद्धि की जानी चाहिए तथा यह कार्य एक या दो पृथक न्यायाधीशों को सौंप देना चाहिए।

(4) राज्यों को अपने भूमि सुधार कानून संशोधित करने चाहिए जिससे कि इससे सम्बन्धित बहुत से झगड़े माल गुजारी विभाग द्वारा निबटाए जा सकें।

(5) राज्यों को माल गुजारी विभाग की मशीनरी का विस्तार करना चाहिए जिससे कि विचाराधीन मामलों का तुरन्त निबटारा किया जा सके।

(6) सभी राज्यों के माल गुजारी अधिकारियों को भूमि सुधार मामलों के निबटारे के लिए एक समयबद्ध कार्यक्रम अपनाना चाहिए जिससे इन अधिकारियों के निर्णय के विरुद्ध एक अपील व एक रिवीजन की व्यवस्था होनी चाहिए।

(7) राज्यों में भूमि सुधार कार्यक्रमों का व्यापक प्रचार किया जाना चाहिए।

(8) काश्तकारों और छोटे कृषकों को उनके अधिकारों की सुरक्षा के लिए संगठित किया जाना चाहिए।

(9) प्रत्येक वर्ष भूमि सुधार कार्यक्रमों की विस्तृत समीक्षा की जानी चाहिए।

(10) भूमि सुधार से सम्बन्धित प्रशासनिक तन्त्र को उचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

(11) चकबन्दी में छोटे किसानों की जोतों तथा नए किसानों में वितरण के लिए उपलब्ध आधिक्य भूमि को संयुक्त ब्लाक के रूप में बनाया जाए। इससे इन खेतों के विकास में सार्वजनिक विनियोग आसानी से सम्भव हो सकेगा।

[शेष पृष्ठ 11 पर]

बांसखेड़ी का बंजर इलाका जिसे पंजाबी किसानों ने हरियाली से भर दिया

एन० पी० चौबे

शिवपुरी (म० प्र०) से 10 कि० मी० दूर दक्षिण में बांसखेड़ी ग्राम के आसपास करीब 30 वर्ग कि० मी० का एक ऐसा देहाती इलाका है, जिसमें पंजाब के विभिन्न क्षेत्रों से आए लगभग 200 परिवार खेती के काम में लगे हैं। इन सिख परिवारों का इस क्षेत्र में बसाहट भी कोई पांच छः वर्ष में नहीं हुई बरन् पिछले 15-16 साल में ये धीरे-धीरे कर के यहां पहुंचे हैं। यहां आने वालों में अधिकांश अमृतसर, होशियारपुर, जालंधर, फरीदकोट और गुरुदासपुर जिलों के कृषक परिवार हैं।

पंजाब का किसान वैसे ही मेहनती होता है। उसने इन 15 वर्षों में इस क्षेत्र की काया ही पलट दी है। हर ऋतु में हरियाली से भरे उनके खेत आज उनकी साधना और कठोर श्रम के प्रतीक बन गए हैं। लोग उनकी खेती को हसरत भरी निगाहों से देखते हैं। आज करीब तीन हजार बीघा भूमि पर ये प्रमुख रूप से धान, गेहूं, मटर और मक्का की खेती कर रहे हैं। अनेक सिख परिवारों ने गन्ने की खेती भी बड़े पैमाने पर आरम्भ की थी पर शिवपुरी की शक्कर मिल बन्द हो जाने से इस फसल को बाजार मिलना कठिन हो गया और इसीलिए गन्ना की खेती अब यहां कुछ सीमित होकर मात्र गुड़ बनाने के उद्देश्य से ही की जाती है। खेती के लिए सबसे अधिक जरूरी होता है पानी जिसकी व्यवस्था सरकार पर निर्भर न रहते हुए इन्होंने स्वतः अपने बलबूते पर की है। अपने क्षेत्र में इन परिवारों ने करीब 20 कुएं खोदे हैं साथ ही पास के नालों पर बांध बनाकर अपने व्यय एवं श्रम से 2 कि० मी० दूर तक नालियां बनाकर अपनी धान की खेती को सींचने के लिए पानी मुहैया किया है।

श्री कश्मीर सिंह ने जो बांसखेड़ी के निवासी और पंजाबी परिवारों के सम्माननीय सदस्य हैं, एक भेंट में बताया कि जब वे इस क्षेत्र में आए थे तो चारों तरफ जंगल था, जमीन पथरीली और ऊबड़-खाबड़ थी। स्थानीय मराठों एवं ठाकुरों से क्रय कर इसे साफ कर समतल बनाने में उन्हें यहां काफी श्रम करना पड़ा। बांसखेड़ी ग्राम की खेती के लिए भी दो ढाई कि० मी० दूर से नालियों के द्वारा वे उद्वहन सिंचाई के माध्यम से पानी लाते हैं। अकेले बांसखेड़ी ग्राम के आसपास इन परिवारों ने 70 कुएं बना लिए हैं तथा बिजली पम्प बैठा लिए हैं।

बिजली का वरदान इस क्षेत्र को गांधी शताब्दी वर्ष 1969 में मिल गया था जिसके परिणामस्वरूप ये अपनी खेती को यंत्रीकृत बना सके हैं। क्षेत्र में आज 125 के लगभग बिजली पम्प लगे हैं 50 के करीब ट्रैक्टर हैं। उनकी अपनी गाहनी उड़ावनी की मशीनें हैं। बस्ती बनाकर न रह कर अमूमन हर परिवार अपने खेत पर कुएं के पास फार्म हाउस बनाकर ही रहता है। इससे खेती की रखवाली तो होती ही है साथ ही पशु-पालन, मुर्गीपालन, साग-सब्जी की कृषि, फलदार वृक्षों के बगीचे लगाने आदि में भी मदद मिलती है। शहर जाने हेतु ट्रैक्टर-ट्राली तथा साईकिलें इनके यातायात के प्रमुख माध्यम हैं।

बांसखेड़ी के श्री कश्मीर सिंह तथा चकबांसखेड़ी के श्री जसबीर सिंह अपने क्षेत्र की ग्राम पंचायत के आज पंच हैं। यहां के वासियों के कोर्ट कचहरी शासकीय कार्यालयों और बैंकों आदि का काम भी ये ही निपटाते हैं। क्षेत्र के पंजाबी परिवारों में एकता है तथा तीज-त्यौहार साथ उठ-बैठकर हंसी-खुशी मनाते हैं। थोड़ी दूर पड़ोरा ग्राम के समीप ये अपना गुरुद्वारा बना रहे हैं। निशान साहब की स्थापना हो चुकी है। साल दो साल में गुरुद्वारा भी बन जाएगा। मुख्य सड़क से अपने ग्राम को जोड़ने के लिए कुछ श्रमदान कुछ शासकीय मदद से खरंजा तथा पुल-पुलिया इन्होंने बना लिए हैं। सड़क बनाने का काम भी धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा है।

इनके परिश्रम से पुष्पित पल्लवित होती कृषि को देखकर यहां के मूल निवासी जिनमें अधिकांश ब्राह्मण, राजा, गुर्जर,

ठाकुर, मराठा तथा आदिवासी हैं, भी अपनी खेती को सुधारने में लग गये हैं। वे भी कुएं खोद रहे हैं तथा खेतों में खाद बीज का उपयोग कर कृषि को हर प्रकार से उन्नत बनाने में लगे हैं। ये पंजाबी परिवार उन्हें प्रोत्साहित कर आगे बढ़ने के उनके प्रयत्नों में उनकी मदद करते हैं तथा उनका मार्ग-दर्शन करते हैं। आसपास के जंगली इलाके में रहने वाले आदिवासी इन परिवारों से विशेष रूप से घुलमिल गए हैं—जहां पंजाबी परिवार अपनी खेती संवारने पशुपालन में उनकी मदद लेते हैं वहीं ये उन्हें सरकार से मिली उनकी जमीन को सींचने की व्यवस्था करते हैं। बीज दिलाने, मुर्गीपालन, भेड़-बकरी पालन के उनके कार्यों में उनकी मदद करते हैं। ये आदिवासी इनके साथ काम करते-करते अपनी भाषा के साथ ही गुरुमुखी भी बोलने लगे हैं वहीं यहां के पंजाबी परिवार आदिवासियों की भाषा में उनसे बात करते मिल जाते हैं। आज क्षेत्र के आदिवासियों की माली हालत पहले से काफी अच्छी है। साहूकारों के कर्ज से वे मुक्त हैं और अपनी जमीन के स्वतः भू-स्वामी हैं।

यहां के पंजाबी परिवारों का दूसरा व्यवसाय है शहरों को दूध की पूर्ति। डेयरी के धंधे में भी ये स्थानीय लोगों की तुलना में काफी आगे हैं। गाय-भैंसे इनकी दुधारू हैं तथा उनके खली, पानी, घास की इन्होंने विशेष व्यवस्था कर रखी है। जानवरों के लिए चरू (धनी ज्वार) के खेत के खेत लगा रखे हैं जहां बारह माह इनके मवेशी को चारा सुलभ रहता है। बगीचे विकसित किए हैं उनमें पपीता, नीबू के फल प्रमुख रूप से लिए जाते हैं। मुर्गीपालन तथा सब्जी उगाने का कार्य भी लगभग सभी परिवार करते हैं। इससे घर की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ ही अतिरिक्त आय भी होती है।

बैंक से आर्थिक मदद इन पंजाबी परिवारों ने ट्रैक्टर, खाद, बीज, पम्प के लिए ली है पर सभी बैंकों की किश्त नियमित रूप से चुका रहे हैं। एक भी परिवार डिफाल्टर नहीं है। म० प्र० सरकार के लेव्ही उगाओ अभियान में अकेले बांसखेड़ी ग्राम के पंजाबी परिवारों ने पिछले साल लेव्ही के रूप में 100 क्विंटल गेहूं दिया।

उन्नति से और उन्नति की ओर बढ़ने का लक्ष्य लेकर ये परिवार इस क्षेत्र को भी पंजाब के समान उर्वर, उपजाऊ, धनधान्य से आपूरित बनाने के अपने भागीरथ प्रयत्नों में जुटे हुए हैं परन्तु इनके सामने कुछ बुनियादी समस्याएं भी हैं जो इनकी प्रगति में अवरोधक बनी हैं।

बांसखेड़ी से कुछ ही दूर एक सिंचाई तालाब है जो इनकी गेहूं की खेती को एक दो पानी ही दे पाता है। इसका पानी रिसन के द्वारा निकल जाता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि तालाब की रिसन को शीघ्र बन्द किया जाए। इसके अलावा, ये पंजाबी कृषक क्षेत्र के मवेशियों से भी परेशान हैं। ग्रीष्म ऋतु में जब सब ओर चारे की कमी रहती है तभी ये इनके हरे-भरे खेतों पर धावा बोलते हैं लोग रात-बिरात भी अपने मवेशियों को इनके खेतों में घुसा देते हैं।

शिक्षा संबंधी एक अन्य समस्या है जिसका निदान भी शीघ्र होना अपेक्षित है। गांव में स्कूल भवन ये बनाकर देने को तैयार हैं पर शिक्षक की व्यवस्था सरकार की ओर से चाहते हैं।

गांव में न तो लैटर बाक्स है और न ही गांव तक डाक पहुंचाने की कोई व्यवस्था है। इनकी बसाहट वाले ग्रामों को मुख्य मार्ग से जोड़ने वाले और बारह माह खुले रहने वाले पहुंच मार्गों के निर्माण में शासकीय मदद की इन्हें आवश्यकता है।

इन पंजाबी परिवारों को कठिन श्रम करने में यहां की जलवायु पंजाब की तुलना में अधिक अनुकूल लगती है परन्तु पंजाब जैसी बैंक की सुविधा, नहरों का सिंचाई जल, स्वास्थ्य सुविधाएं तथा इनके बच्चों के लिये शिक्षा के प्रबन्ध आदि की बात जब ये स्मरण करते हैं तो कुछ उदास हो जाते हैं। फिर भी ये हताश नहीं हैं। नई जमीन को तोड़कर इस इलाके को भी शस्य-श्यामला बनाने, बारह माह हरियाली से ओतप्रोत रखने तथा धान, मक्का, मटर, और गेहूं की भरपूर फसलें लेकर इस ऊबड़-खाबड़ भूमि पर एक मिनी पंजाब को गढ़ने का आशा-भरा सपना इनमें से हरेक के मन में हिलोरें ले रहा है। □

प्रेषक:
एन० पी० चौबे,
सहायक संचालक (प्रका०)
95 ए/1-तुलसीनगर
भोपाल (म० प्र०)

ग्राम विकास तथा समाज कल्याण

(पृष्ठ 9 का शेषांश)

भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। देश के विकास के लिए यह आवश्यक है कि कृषि क्षेत्र को उन्नत किया जाए। कृषि क्षेत्र की उन्नति तभी सम्भव है जब कि काश्तकार को भूमि पर स्वामित्व प्रदान किया जाए जिससे कृषक पूर्ण क्षमता से कार्य कर सकें। कृषक की पूर्ण क्षमता के प्रयोग से उसका रहन-सहन का स्तर ऊंचा हो सकेगा। यह तभी सम्भव है जब कि भूमि सुधार के विभिन्न कार्यक्रमों को तेजी से कार्यान्वित किया जाए। बिना व्यापक एवं प्रभाव पूर्ण भूमि सुधार कार्यक्रमों के भारत में सुदढ़ आर्थिक विकास की परिकल्पना साकार न हो सकेगी। भारत का सुदढ़ विकास एवं सुनियोजित उत्थान भूमि सुधार कार्यक्रमों की सफलता में ही निहित है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह एक ऐच्छिक कार्यक्रम न रह कर एक अनिवार्यता बन गई है तथा इन कार्यक्रमों की सफलता से ही गांधी जी के सपनों का भारत बन सकेगा, अन्यथा नहीं। □

जी० डी० अग्रवाल
प्रवक्ता
वाणिज्य विभाग
पी० सी० बागला महाविद्यालय
हाथरस (उ० प्र०)

तमिलनाडु में रोज़गार के साधन

सतीश कुमार जैन

तमिलनाडु का नाम लेते ही एक ऐसे राज्य का चित्र सामने आ जाता है जो उद्योगों में निरन्तर वृद्धि कर रहा है, मन्दिरों से परिपूर्ण है तथा जिसके निवासी धर्म-भावना, सीधे-सादे रहन-सहन, सरल प्रवृति तथा सादगी के लिए प्रसिद्ध हैं। तमिलनाडु के निवासी अत्यन्त परिश्रमशील और अल्पतुष्ट होते हैं। अपरिग्रह एक साधारण तमिल वासी के जीवन से भली भांति आत्मसात हो गया है।

सुदूर दक्षिण स्थित तमिलनाडु राज्य प्राचीनकाल में मलयगिरि नाम से प्रसिद्ध था। राज्य का कुल क्षेत्रफल 130.07 लाख हेक्टेयर है तथा कुल जनसंख्या है लगभग 5 करोड़।

तमिलनाडु में औद्योगिक विकास के लिए तमिलनाडु औद्योगिक विकास निगम लि० की प्रमख भूमिका है। यद्यपि सन् 1969 में इसकी स्थापना सीमेंट का एक कारखाना तथा इस्पात का एक कारखाना स्थापित करने के लिए की गई थी, किन्तु कालान्तर में इसका कार्य क्षेत्र बढ़ा कर इसके अन्तर्गत निजी क्षेत्र के सहयोग से बड़े उद्योगों को स्थापित करना भी सम्मिलित कर लिया गया है। निगम ने कमजोर चल रहे कुछ कारखानों को आर्थिक सहायता भी दी है। इसके अन्तर्गत स्थापित तीन प्रतिष्ठान सरकारी क्षेत्र में तथा चौदह प्रतिष्ठान संयुक्त क्षेत्र में निर्माणरत हैं। दो प्रतिष्ठान सार्वजनिक क्षेत्र में तथा तेरह प्रतिष्ठान संयुक्त क्षेत्र में निर्माणाधीन हैं। इसके अतिरिक्त सात प्रतिष्ठान सार्वजनिक क्षेत्र में तथा बारह प्रतिष्ठान संयुक्त क्षेत्र में स्थापित किए जाने के लिए विचाराधीन हैं। राज्य में खनिज पदार्थों के विकास पर भी यथेष्ट ध्यान दिया जा रहा है।

मद्रास के निकट महाबलीपुरम मार्ग पर लैतिस पुल के समीप बिजली के उपकरण तथा सामान बनाने की छोटी इकाइयां स्थापित करने के लिए 46 हेक्टेयर विकसित भूमि सरकार द्वारा ली गई है। इसके अतिरिक्त भी अन्य क्षेत्रों में इसी प्रकार की एस्टेट स्थापित करने का विचार है।

तमिलनाडु लघु उद्योग विकास निगम लघु उद्योगों के विकास के लिए प्रयत्नशील है। यह उद्यमकर्ताओं को ऐसी आरम्भिक एवं आवश्यक सुविधाएं प्रदान करता है जिससे लघु उद्योगों को लगाना सम्भव हो सके। यह ऐसे क्षेत्रों का निर्माण करता है जिनमें उद्यमकर्ता अपनी इकाइयां स्थापित कर सकें। इसके अतिरिक्त, यह निगम अनेक जिलों में अपने व्यापार केन्द्र तथा कच्चे माल के गोदाम खोलने के लिए प्रयत्न कर रहा है जिससे उद्यमकर्ता अपने ही जिले में कच्चा माल प्राप्त कर सकें। जिन नगरों की जन-संख्या एक लाख से कम है वहां यह निगम ब्याज रहित ऋण भी प्रदान करता है। यह ऋण नए उद्योग स्थापित करने के लिए तथा स्थापित उद्योगों का विस्तार करने के लिए दिए जाते हैं।

राज्य में डिन्डीगल में तीन वर्ष के प्रशिक्षण का एक ऐसा केन्द्र स्थापित किया गया है जहां उन्हें औज़ार और डाई का डिज़ाइन बनाने की व्यावहारिक शिक्षा दी जाती है। प्रत्येक वर्ष इसमें प्रशिक्षण के लिए 30 छात्र लिए जाते हैं।

राज्य का औद्योगिक सहकारी विभाग तीव्र गति से बढ़ रहा है। इसके अन्तर्गत स्थापित इकाइयों का कार्य उत्पादन एवं उत्पादित सामग्री की बिक्री करना है। इस कार्य को अधिक अर्थपूर्ण तथा सफल बनाने के लिए इन सहकारी समितियों के प्रबंधकों को व्यवस्था सम्बन्धी प्रशिक्षण देने पर भी कार्य हो रहा है।

जिला औद्योगिक केन्द्रों के अन्तर्गत थोड़े ही समय में कम विकसित और उन क्षेत्रों में जिनमें पारम्परिक रूप से उद्योग स्थापित नहीं किए गए हैं लघु उद्योग स्थापित करने के लिए जागरूकता उत्पन्न हुई है। बुनियादी ग्रामीण सेवा केन्द्रों के अन्तर्गत पिछड़े क्षेत्रों के ग्रामीण युवकों को आधुनिक मशीन एवं उपकरण स्थापित करने के लिए प्रशिक्षित किया जा रहा है।

राज्य में हथकरघा उद्योग यथेष्ट विकसित है। तमिलनाडु में बनी पलंग की चादरों, तकियों के गिलाफों, मेजपोशों तथा हथकरघे पर बने अन्य वस्त्रों की देश भर में मांग है। यह वस्त्र अपेक्षाकृत अधिक मज़बूत, सस्ते तथा पक्के रंग के होते हैं। राज्य का हथ-करघा एवं वस्त्र विभाग इस व्यवसाय में लगे व्यक्तियों को आर्थिक सहायता दे रहा है। हथकरघों द्वारा उत्पादित अधिक सामान निर्यात करने वाले व्यक्ति पुरस्कृत किए जाते हैं। हथकरघे पर काम करने वाले बुनकरों के प्रशिक्षण के लिए मदुरै, त्रिचि, सलेम एवं कोयम्बतूर में चार प्रशिक्षण केन्द्र एवं डिज़ाइन केन्द्र स्थापित किए गए हैं। हथकरघा वस्त्रों के उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए राज्य सरकार खरीदारों को अच्छी छूट देती है। 31 मार्च, 1981 के आंकड़ों के अनुसार राज्य में 1187 बुनि-यादी बुनकर सहकारी समितियां स्थापित हैं, जिनके द्वारा 75 करोड़ रुपयों का हथ-करघा वस्त्र प्रतिवर्ष बन रहा है। केवल 1980–81 में ही राज्य सरकार ने लगभग पांच करोड़ रुपयों की छूट का भार वहन किया। मद्रास के अतिरिक्त मदुरै एवं कोयम्बतूर भी वस्त्र उद्योग के प्रसिद्ध केन्द्र बन गए हैं।

- राज्य में रिजर्व बैंक की उस योजना को भी चलाया जा रहा है जिसके अन्तर्गत हथ-करघा बुनकरों की सहकारी समितियों को बैंकों की साधारण ब्याज की दर से ढ़ाई प्रतिशत कम दर पर ऋण दिया जाता है।

राज्य में औद्योगिक बुनकरों/बड़े मिलों में काम करने वाले बुनकरों की सहकारी समितियां भी उन स्थानों पर स्थापित की गई हैं जहां वह अधिक संख्या में रहते हैं। यह इस उद्देश्य से किया जा रहा है कि जिससे वह उचित वेतन अथवा मजदूरी पर कार्य पर लगे रहें। छठी पंचवर्षीय योजना में ऐसी और अधिक सहकारी समितियां स्थापित करने का विचार है। राज्य सरकार बुनकरों को आवासगृह बनाने के लिए भी सहायता कर रही है।

हथकरघा सहकारी समितियों को इस बात के लिए उत्साहित किया जा रहा है कि वह पुराने करघों के स्थान पर नए करघों को लगाएं। राज्य सरकार इस बात के लिए भी प्रयत्नशील है कि बुनकरों को सहकारी समितियों का सदस्य बना कर उन्हें ठेकेदार बुनकरों के चंगुल से मुक्त करें।

तमिलनाडु में कुल 5.56 लाख हथ-करघों में से 2.70 लाख हथकरघे निजी क्षेत्र में हैं। भारत सरकार एवं राज्य सरकार प्रयत्नशील है कि वह अधिक से अधिक हथ-करघा बुनकरों को सहकारी समितियों का सदस्य बना कर उनका आर्थिक कल्याण करें। राज्य में एक नई योजना आरम्भ की जा रही है जिसके अन्तर्गत बुनकरों को ठेकेदार बुन-करों के चंगुल से जल्दी छुटकारा दिलाने के लिए प्रयास किए जाएंगे।

अनुमान लगाया गया है कि लगभग 5000 बुनकरों को तत्काल ही बुनकर ठेके-दारों से छुटकारा दिलाने के लिए उनके द्वारा दिए गए ऋण की अदायगी के लिए आर्थिक सहायता देना आवश्यक होगा। प्रति बुनकर द्वारा लिए गए लगभग 2000/- रु० के ऋण के हिसाब से 10,000 बुनकरों को इस मसी-बत से छुटकारा दिलाने के लिए राज्य की 1982–83 वार्षिक योजना में इण्डियन ओवरसीज बैंक से लगभग दो करोड़ रुपयों के ऋण लेने का प्रावधान किया गया है। इस योजना को त्वरित गति से कार्यान्वित करने के लिए अधिक से अधिक बनकरों को सहकारी समितियों का सदस्य बनाने और उनको उचित मजदूरी पर लगातार रोजगार दिलाने के लिए 1982–83 की वार्षिक योजना में कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए भी समुचित प्रावधान किया गया है।

राज्य में रेशम उद्योग को और अधिक विकसित करने के लिए प्रयास किया जा रहा है। हौसुर, कोलट्टी, मदाहल्ली तथा पेनकोट्टा में स्थापित सरकारी रेशम फार्मों में और अधिक सुधार किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त, विस्तार केन्द्रों की स्थापना, प्रदर्शन एवं प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना, प्रशिक्षण कार्य-क्रमों एवं देहातों में लगभग 50 सामूहिक चाकी-पालन केन्द्रों को सहकारी क्षेत्र में स्थापित करने पर भी बल दिया जा रहा है। तमिलनाडु में रसायन, एल्यूमिनियम और अग्नि निरोधक ईंटों का निर्माण अच्छे बड़े स्तर पर हो रहा है। हस्तकला सम्बन्धी उद्योगों का अब निरन्तर विकास हो रहा है। तमिलनाडु के कारीगर धातु की कलात्मक मूर्तियां बनाने के लिए समस्त देश में प्रसिद्ध हैं। नटराज की धातु की मूर्ति तो राज्य के कारीगरों की विश्व भर को एक विशिष्ट देन है। पीतल का घरेलू एवं सजावटी सामान बनाने में भी राज्य के कारीगरों ने यथेष्ट प्रसिद्धि प्राप्त की है। तंजावूर में निर्मित पीतल एवं कांस्य की तश्तरियां, थाल, डिब्बों तथा अन्य सामग्री की अब विश्व भर के कला प्रेमियों एवं पर्यटकों में मांग है। तंजावूर के अतिरिक्त, त्रिचुरापल्ली एवं मदुरै में चिड़ियों, मन्दिरों, जानवरों, फूलों, मानव आकृतियों तथा धार्मिक प्रसंगों से सम्बन्धित सुन्दर माडल कारीगरों द्वारा निर्मित किए जाते हैं, जिनकी सजावटी सामान के रूप में यथेष्ट मांग है।

तमिलनाडु में कृषि आधारित उद्योगों का भी विकास हो रहा है और अपने ही उत्पादन द्वारा यह राज्य के निवासियों की इन आ-वश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम हो गया है।

जहां बड़े उद्योग तथा लघु उद्योग तमिलनाडु में धीरे-धीरे वृद्धि पर हैं, इसमें स्थापित नेवेली लिगनाइट इन्टीगरेटेड प्रोजेक्ट एक राष्ट्रीय गौरव बन चुका है। इसके अन्तर्गत खनिज निष्कासन, विद्यत उत्पादन, उर्वरक उत्पादन आदि कार्य भी अब यथेष्ठ उन्नति कर रहे हैं।

राज्य में सहकारी समितियों को गठित करने पर और वर्तमान समितियों को और अधिक मजबूत बनाने पर विशेष बल दिया जा रहा है। इसके लिए नारियल रेशा उद्योग, माचिस उद्योग, सिल्क उद्योग एवं चाय उद्योग में कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए नई सहकारी समितियां गठित की जाएंगी अथवा वर्तमान समितियों के कार्य की जांच कर उनमें उत्पन्न त्रुटियों को दूर किया जाएगा और उन्हें कारगर ढंग से चलाया जाएगा।

राज्य में कुल वन क्षेत्रफल 21.79 लाख हेक्टेयर है जो राज्य की कुल भूमि का 16.7 प्रतिशत है। छठी पंचवर्षीय योजना में वन विकास के लिए 95 करोड़ रुपयों की राशि निर्धारित की गई है। इसमें से लगभग 37 करोड़ रुपये केवल सामाजिक वानिकी योजनाओं पर व्यय किए जाने का प्रावधान है। अन्य वृक्षारोपण योजनाओं के लिए लगभग 23 करोड़ रुपयों का अतिरिक्त प्रावधान है। इस प्रकार केवल वृक्षारोपण योजनाओं पर ही 1980–85 के मध्य लगभग 50 करोड़ रुपये व्यय किए जाएंगे। इसके अतिरिक्त, लगभग 6 करोड़ रुपये विश्व बैंक की सहायता से आरम्भ की जाने वाली काजू विकास परियोजना को क्रिया-न्वित करने पर व्यय किए जाएंगे। राज्य का विकास निगम भी वृक्षारोपण कार्य कर रहा है। इन वृक्षारोपण योजनाओं से जहां राज्य में ईंधन के लिए लकड़ी, भवन निर्माण व फर्नीचर निर्माण में उपयुक्त होने वाले काष्ठ तथा काष्ठ आधारित उद्योगों के लिए कच्चा माल तथा निर्यात के लिए अधिक काजू उपलब्ध होगा वहां साथ ही साथ बहुत अधिक व्यक्तियों को मजदूरी आदि से रोजगार भी मिलेगा। यह सभी योजनाएं श्रम प्रधान भी हैं। कुल मिलाकर तमिल-नाडु राज्य रोजगार के साधन बढ़ाने के लिए यथेष्ठ प्रयत्नशील है। □

688, बाबा खड्ग सिंह मार्ग,
नई दिल्ली-110001

जनजाति विकास की दिशा में बढ़ते कदम

डा० भूपिन्दर सिंह

अभी हाल में उड़ीसा के दूरदराज के इलाकों में रहने वाले साओरा नाम की जनजाति के प्रतिनिधियों के साथ बातचीत की गई थी, जिसमें इन प्रतिनिधियों ने अपने लोगों के लिए शिक्षा, पीने के पानी, सिंचाई और कुछ ऐसी ही अन्य सुविधाओं की मांग की थी। यह बातचीत उड़ीसा के गंजाम जिले में पहाड़ियों में बसे टुम्बर नाम के गांव में हुई थी। पांच साल पहले इस जनजाति के ये ही प्रतिनिधि कुछ भी नहीं कहते थे और इस तरह की मांगें तो वे कभी नहीं रख सकते थे। दरअसल पांच साल पहले उस गांव तक किसी वाहन के पहुंचने की संभावना भी नहीं थी। लेकिन इस दौरान कई उत्साहवर्द्धक बातें हुईं। कई विकास कार्य पूरे हुए, स्कूल खोले गए, स्वास्थ्य संस्थान भी बनने लगे हैं। संचार साधनों के जरिए दूरदराज के इलाकों को एक-दूसरे से जोड़ा जा रहा है। प्रगति की दूसरी तस्वीर यह सामने आई कि इन नए संस्थानों के स्थापित हो जाने से जनजातियों में उच्च स्तर के विकास की लालसा बढ़ गयी और वे भी अधिक इसके लिए इच्छुक हो गए हैं कि इस तरह के संस्थान और बड़ी संख्या में कायम किए जाएं। इसलिए यह कहा जा सकता है कि इस क्षेत्र के जनजाति सदस्यों ने अपनी चुप्पी छोड़ दी है और अपनी मांगों को मुखर करने के लिए जागरूक हो गए हैं। उनकी आकांक्षाएं बढ़ रही हैं। वे चाहते हैं कि वे सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों की ओर समाज के अन्य वर्गों के साथ कदम से कदम बढ़ाकर आगे बढ़ें।

बुनियादी तौर पर देश में अनुसूचित जातियों के चार करोड़ लोगों से अधिक की कहानी अपने को एक दूसरे से अलग-अलग रखने की कहानी रही है। जनजातियां दूरदराज के इलाकों में रहती आई हैं। घने जंगलों, पहाड़ी ढलानों और पठारी क्षेत्रों में वे रहती आई हैं जहां उन्हें पर्याप्त मात्रा में प्राकृतिक साधन उपलब्ध नहीं हो पाए। एक ओर अपने को अलग-अलग रखने की वजह से जहां वे वैज्ञानिक और तकनीकी के क्षेत्र में हुई प्रगति के लाभों से वंचित रहे, वहीं दूसरी ओर उनको अलग तौर-तरीकों, उनकी अलग संस्कृतियां और अलग बोलियां विकसित हुईं।

जनजातियां न केवल समाज के अन्य वर्गों से अलग-अलग रहीं, बल्कि एक जनजाति समुदाय दूसरे जनजाति समुदाय से भी अलग रहा। इससे देश में आबादी की दृष्टि से एक रंग-बिरंगापन आया। 1971 की जनगणना में 250 विभिन्न अनुसूचित जनजाति समुदायों का उल्लेख किया गया है। यह वर्गीकरण जनजातियों के रहने के स्थान, उनकी संस्कृति, भाषा, उनके शारीरिक रूप-रंग और उनकी विशिष्ट आदतों और तौर-तरीकों पर आधारित है। एक सौ से अधिक विभिन्न बोलियां बोलने वाली ये जनजातियां देश की संस्कृति को विभिन्न रंगों से सजाती हैं। कुछ जनजाति समुदाय आगे बढ़े हैं। एक हद तक उनका सांस्कृतिक विकास हुआ है और कमोबेश वे देश की शेष आबादी के साथ घुलमिल गए हैं। लेकिन उड़ीसा में कुछ ऐसी जनजातियां आज भी उसी हालत में हैं, जैसे कि शताब्दियों पहले उनकी हालत थी। ऐसे विशिष्ट जनजातियों के लोग अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में पाए जाते हैं। इनमें से ऐसी ही एक जनजाति है, जिसके सदस्यों को सेनटिनोलीज कहते हैं। इनकी संख्या लगभग पचास है। इनका बाहरी दुनिया से कोई सम्पर्क नहीं है। ऐसी ही एक और जनजाति है जिसे जरावा कहते हैं। इसके सदस्यों की संख्या लगभग 250 है। इनसे तीन या चार बार सम्पर्क स्थापित करने की कोशिश की गयी, लेकिन भाषा की समस्या बराबर आड़े आई। सबसे छोटा जनजाति समुदाय को ग्रेट अंडमनीज कहते हैं, जिसके लोगों की संख्या कोई दो वर्ष पहले घटकर 24 हो गयी थी, लेकिन अब 26 है। इन लोगों की देखभाल अंडमान और निकोबार प्रशासन करता है।

लगभग तीस साल पहले, जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि जनजातियों में उनकी बड़ी रुचि है, लेकिन यह रुचि किसी उत्सुकता या आदिवासियों के कुछ अजीबोगरीब तौर-तरीकों के कारण नहीं थी बल्कि नेहरू जी को उनमें कई गुण दिखाई पड़े। उन्होंने ऐसा भी सोचा कि इन जनजातियों का रहन-सहन अच्छा है या हमारा रहन-सहन अच्छा है। लेकिन यह विश्वास नेहरू जी को बराबर रहा कि कुछ मामलों में इन जनजातियों के तौर-तरीके या उनकी जीवन पद्धति हमसे अच्छी है। नेहरू जी ने अनुशासन में बंधी इन जनजातियों की सराहना की और उन्हें उनकी जीवन पद्धति में लोकतंत्री तौर-तरीके दिखाई पड़े। नृत्य और संगीत तथा उमंगों से भरा इन जनजातियों का जीवन भी नेहरू जी को आकर्षित कर गया।

हमारे देश के संविधान में अनुसूचित जनजातियों की विशेष सुरक्षा की व्यवस्था की गयी है। निर्देशक सिद्धांतों में से एक सिद्धांत में यह कहा गया है कि इन जनजातियों के आर्थिक और शैक्षिक हितों को बढ़ावा देने की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए और हर तरह के शोषण से उनकी रक्षा की जानी चाहिए। इसलिए हमारे देश की सरकार की बराबर यह नीति रही है कि जनजातियों के सदस्यों की जमीनें न छीनी जाएं और उनके सामान की खरीद-बिक्री की उचित हाट व्यवस्था की जाए। महाजनों के शोषण से उन्हें बचाया जाए, शराब बेचने वाले लोग आदिवासियों को अपने चंगुल में न फंसा पाएं और ठेकेदार उन्हें परेशान न कर पाएं। इन सारे उपायों से जनजातियों को बन्धुवा मजदूरी से मुक्त कराने में भी सहायता मिली है और उनके पुनर्वास की व्यवस्था की ओर सरकार ध्यान दे रही है।

सामाजिक आर्थिक मोर्चे पर पचास के दशक के शुरू में योजनाबद्ध विकास के दौर से ही सरकार जनजातियों के उत्थान के लिए समय-समय पर प्रशासनिक और वित्तीय उपाय करती रही है । पचास के दशक में विशेष बहुद्देश्यीय आदिवासी विकास खंड स्थापित कायम किए गए जबकि साठ के दशक में जनजाति विकास खंड स्थापित किए गए । 1974 में पांचवीं योजना के शुरू में आदिवासियों के लिए उपयोजना का सिलसिला भी शुरू हुआ । इस योजना के अन्तर्गत सबसे पहले यह तय किया जाता है कि किस क्षेत्र में यह जनजाति उपयोजना शुरू की जाए । इसके बाद समन्वित विकास के लिए सारे साधनों को जुटाया जाता है और योजना के लिए केन्द्रीय राशि की व्यवस्था की जाती है ।

सरकार जनजातियों के उत्थान के लिए कितनी जागरूक है, इसका इसी बात से पता चल जाता है कि पांचवीं योजना के दौरान यानी 1974 से 1979 की अवधि में राज्यों को जनजाति विकास के लिए एक अरब 90 करोड़ रुपये की विशेष केन्द्रीय सहायता देने की व्यवस्था की गयी है । योजना अवधि के दौरान कुल मिलाकर लगभग दस अरब रुपये खर्च किए गए । छठी योजना अवधि में जो कि 1980 से 1985 तक चलेगी, पांचवीं योजना की धनराशि की तुलना में चार गुना अधिक वित्तीय सहायता दी जाएगी । इसमें चार अरब 70 करोड़ रुपये की विशेष केन्द्रीय सहायता भी शामिल होगी । इन सारी गतिविधियों से जनजातियों की आकांक्षाओं में वृद्धि हुई है जिन्हें अब पूरा करने की आवश्यकता है । इसी उद्देश्य से छठी योजना में जनजाति उपयोजना के लक्ष्यों को आवश्यकता के अनुरूप बनाया गया है । प्रधान मंत्री के नए 20 सूत्री कार्यक्रम में यह कहा गया है कि देश में कम से कम पचास प्रतिशत अनुसूचित जनजाति परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने के लिए जोरदार और व्यापक अभियान चलाया जाए । इस से यह आशा बंधती है कि जनजातियों को उनकी सारी विविधताओं के बावजूद राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा में शामिल करने में सहायता मिलेगी । □

(आकाशवाणी, सामयिकी से साभार)

लघु कथा

धरती मां रूठ गई तो

राजेन्द्र परदेशी

बड़े भोर उठकर ठाकुर ने बैलों की नांद में चारा लगा दिया । बैल खाने लगे तो वह लोटा लेकर मैदान चले गए ।

उनकी पत्नी भी अब तक जाग गई थी । ठाकुर जब लौटकर आए तब वह मट्ठा बिलो चुकी थी । इसीलिए कहा—"गोपाल के बाबू ! थोड़ा मट्ठा-भात खा लो । पता नहीं फिर कब दाना मुंह में पड़े ।" साथ ही, बैठने के लिए पीढ़ा लगा दिया ।

ठाकुर पीढ़ा पर बैठते हुए बोले —"गोपाल की अम्मा ! गोपाल को दोपहर में भेज देना । वह आ जाएगा तब मैं खाना खाने आ जाऊंगा । आजकल खलिहान अकेले छोड़ने लायक नहीं है ।"

—"ठीक है, भेज दूंगी ।" कहकर थाली उनके सामने रख दी ।

बिना कुछ बोले ठाकुर बासी भात और मट्ठा खाने लगे । उधर बैल भी चारा खाकर नांद चाट रहे थे । शायद वह भी समझ रहे थे कि शाम के पहले फिर कहां खाने को मिलेगा ।

खलिहान में मड़ाई करते-करते सूरज सिर पर चढ़ आया लेकिन गोपाल का कहीं पता ठिकाना नहीं था । हारकर ठाकुर मंगरुवा के ऊपर खलिहान छोड़कर घर की ओर चल पड़े ।

एक तो सुबह के खाये और घाम से माथा भी टनटना रहा था, ऊपर से गोपाल का गुस्सा । दालान में पैर रखते ही ठाकुर ऊंची आवाज में बोले—"गोपाल की अम्मा ! कहां हो ?"

—"अरे ! कुछ बोलोगे भी कि खाली पूछोगे कि कहां हूं ।" पत्नी लोटे में पानी लाकर सामने रखते हुए बोली ।

—"तुम नाराज क्यों हो रही हो ? मैं पूछता हूं गोपाल कहां है ?" हाथ धोते हुए पूछा ।

—"थाली भर ठूंसकर (खाकर) कमरे में लेटा है और है कहां?" चौके से ही व्यंग्य करती हुई बोली ।

—"तो तुमने उससे कहा नहीं था कि खलिहान में जाए ।"

—"मैं तो कब से चिल्ला रही हूं कि जाकर अपने बाबू को भेज दे । आकर खा जाएं ।" सामने खाना रखते हुए कहा ।

—"तो उसने क्या कहा ?"

—"क्या कहा ? यही कि मुझसे घाम (धूप) में खड़ा नहीं हुआ जाता । बहुत गर्मी लगती है ।"

—"तो क्या उसके लिए खेत खलिहान में बिजली का पंखा लगेगा ?"

—"वह तो कहता है कि हम खेती नहीं करेंगे ।"

—"तो क्या करेगा ?"

—"कहता है कि नौकरी करूंगा, खेती नहीं ।" स्थिति को स्पष्ट करते हुए पत्नी बोली ।

किसान का बेटा । पढ़ लेने के बाद अपनी धरती को भूल जाएगा । अपनी पहचान खो देगा, मात्र सफेदपोशी के लिए । इसकी कल्पना करके ही ठाकुर सिहर गये । उनका मन गोपाल के विचारों को जानकर पीड़ा से कराह उठा । बोले—"गोपाल की अम्मा ! दूसरे का जूठा उठाना अच्छा लगता है, अपना नहीं । उससे जाकर कह दो कि किसान के यहां जन्म लिया है । अपनी धरती को न भूले ; धरती मां रूठ गई तो लाख कमायगा, पेट नहीं भरेगा ।" □

राजेन्द्र परदेसी,
सहायक अभियन्ता,
निकट त्रिपाठी चित्र मंदिर,
गांधीनगर, बस्ती (उ० प्र०)

अरावली के अंचल में नए जीवन की हलचल

जगमोहनलाल

अरावली पर्वत श्रेणियों की गोद में उदयपुर से आबू जाने वाली सड़क पर कोई 70 किलोमीटर की दूरी पर एक सुंदर तिराहा है : देवला । वहां पकौड़ियों और चाय की दुकान अथवा मक्की की मोटी-मोटी रोटी खिलाने वाले छोटे ढाबों पर बैठकर किसी से पूछ कर देखिए : सबसे मुख्य बात वहीं सुनने को मिलती है कि कोटड़ा के सड़क से जुड़ जाने से अब बहुत आराम-सुविधा हो गई है । पहले कच्चे रास्ते पर एक बस आती-जाती थी । पर पिछले साल देवला से कोटड़ा तक 53 किलोमीटर की पक्की सड़क हो जाने से राजस्थान के इस पिछड़े आदिवासी इलाके में बसों का आवागमन बढ़ गया है । इससे केवल देवला के चौराहे पर ही अनेक दुकानें और ढाबे नहीं खुल गए बल्कि कोटड़ा का भी, जो कालापानी कहा जाता था, जीवन बदल गया है । कोटड़ा में बस अड्डे के समीप ही अनेक नई-नई दुकानें बन गई हैं जिनपर रोजमर्रा की लगभग प्रत्येक चीज मिलती है । पर आदिवासियों को शोषण से बचाने के लिए खोले गए सहकारी समिति का भंडार भी महत्वपूर्ण योग दे रहा है । इस भंडार से आदिवासियों को चावल, साबुन, कपड़ा, दाल, खाना पकाने का तेल, डालडा, गुड़, नमक आदि सभी आवश्यक चीजें वाजिब दाम पर मिल जाती हैं । यह भंडार आदिवासियों से वन उपज जैसे अरीठा, धतरी, बिच्छुकाटा, रतन ज्योति आदि चीजें तथा गोंद, शहद आदि खरीद लेता है । इस भंडार पर हमने देखा कि पर्याप्त सप्लाई की सुविधा बनी हुई है हालांकि यहां से कोई 20-21 किलोमीटर दूर बीकरनी के सहकारी भंडार पर काफी दिनों से सप्लाई की कठिनाई थी । कोटड़ा में माध्यमिक स्कूल भी है । वहां आदिवासी छात्रों के लिए एक होस्टल है और लड़कियों के लिए भी होस्टल की नई इमारत हाल में बनी है लेकिन अभी वहां रहने वाली लड़कियों की संख्या बहुत कम है । आदिवासी छात्रों के लिए जो सबसे उपयोगी सिद्ध हुआ है वह है मामेर स्थित आश्रम—स्कूल, जो कोटड़ा से करीब 30 किलोमीटर दूर, ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर है और जहां पहुंचने के लिए गुजरात के क्षेत्र में होकर जाना पड़ता है । 1978 से कार्यरत इस संस्था में आजकल 96 छात्र हैं जिनमें से कुछ तो सौ-सौ किलोमीटर दूर के रहने वाले हैं । इन्हें यहां आश्रम की ओर से सुबह भीगे चने और गुड़ का नाश्ता, दोपहर के खाने में दाल-रोटी और शाम के खाने में हरी सब्जी व रोटी मिलती है । बच्चे दिन में कमरों में पढ़ते है उन्हीं में रात में सोते हैं । आश्रम स्कूल में एक अच्छी बात यह है कि मां-बाप पढ़ने वाले बच्चे की किसी भी समस्या से मुक्त रहते हैं । पर एक नियम जो हमारे विचार से अवरोधक है वह यह कि एक बार भी फेल हो जाने पर आदिवासी बच्चे को आश्रम से निकाल दिया जाता है । यह ठीक है कि बच्चों को ध्यान लगाकर पढ़ना चाहिए पर मुश्किल से पढ़ाई की ओर आकृष्ट होने वाले बच्चे को आश्रम से निकाल देने पर फिर वह उसी जीवन में पहुंच जाता है और उसकी पढ़ाई पर तब तक किया हुआ खर्च निरर्थक हो जाता है ।

[समस्त देश में अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं । प्रस्तुत लेख में राजस्थान के उदयपुर अंचल में चल रही गतिविधियों का विवरण है जो क्षेत्र की यात्रा के दौरान प्राप्त अनुभवों पर आधारित है ।]

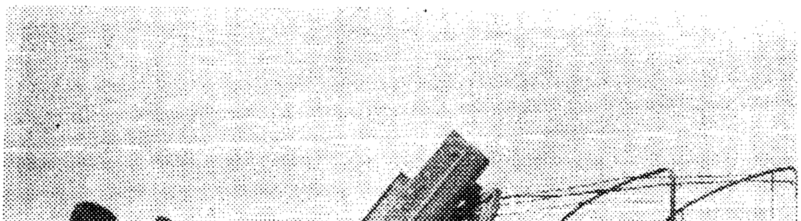

उदयपुर के पास प्रतापगढ़ में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान

हैण्ड पम्प लगाने की दिशा में उदयपुर जिले में काफी अच्छा काम हुआ है । इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उदयपुर से कोटड़ा और उदयपुर-टलाग तक की यात्रा के दौरान मिला । देवास

कोटड़ा के बीच शायद ही कोई ऐसा गांव है जहां हैण्ड पम्प का लाभ न केवल मनुष्य बल्कि पशु भी अपनी प्यास बुझाने में उठाते हैं।

गांवों में बिजली पहुंचाने की दिशा में काफी अच्छा काम हुआ है। कोटड़ा में करीब साल भर पहले ही बिजली पहुंची है और उससे काफी तबदीली आई है। पर कुछ ही मील पर स्थित बीकरनी के लोगों की खास शिकायत है कि वहां बिजली के खम्मे लगे काफी दिन हो चुके हैं लेकिन एक भी व्यक्ति को बिजली का कनेक्शन नहीं मिला।

उदयपुर क्षेत्र की सम्पूर्ण यात्रा में मुझे सबसे उपयोगी और व्यवस्थित काम सलूम्बर पंचायत समिति क्षेत्र के झलारा गांव में नजर आया जहां केसरिया बहूद्देशीय सहकारी समिति आदिवासी युवकों को बीड़ी बनाने का प्रशिक्षण दे रही है जिससे युवकों को करीब 10 रु० रोज की नियमित आमदनी होने लगी है हालांकि ठीक-ठीक आमदनी बीड़ियों की संख्या पर निर्भर करती है। यहां के कर्मचारियों और प्रशिक्षार्थियों दोनों में ही भरपूर उत्साह है। प्रशिक्षण ले रहे युवकों ने बताया कि सहकारी समिति से वे 200 रुपये का आकस्मिक ऋण भी आसानी से ले लेते हैं और अब उन्हें साहूकारों का मुंहताज नहीं रहना पड़ता है। झलारा में सहकारी समिति का उपभोक्ता भंडार आम उपयोग की चीजें भी बेचता है।

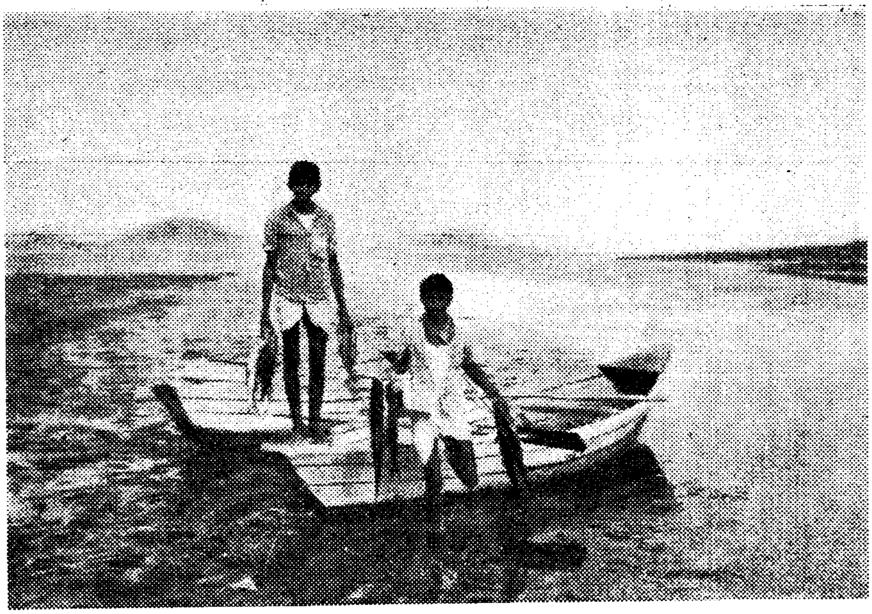

मछुआरों की सहकारी समितियां कार्यरत हैं

एक अन्य क्षेत्र जिससे आदिवासी लाभान्वित हुए हैं वह है—मत्स्यपालन। आदिवासी कल्याण से संबंधित आयुक्त श्री रमाकान्त शर्मा के अनुसार उदयपुर अंचल के करीब 10 हजार लोग इस धन्धे से लाभान्वित हुए हैं। जयसमन्द झील के पास 6 गांवों में मत्स्यपालन के लिए आदिवासी सहकारी समितियां बनाई गई हैं जिनमें 600 सदस्य हैं। इन समितियों ने करीब साढ़े 6 लाख रुपये सरकार को भी पट्टे के रूप में दिए हैं। 1980-81 में इन समितियों ने कुल मिलाकर 461 टन मछलियां पकड़ीं और 1.86 लाख रुपये का लाभ कमाया जिससे औसतन हर सदस्य को 10-11 रुपये प्रतिदिन की आमदनी हुई। पर 1981-82 में आसार कुछ अच्छे नजर नहीं आते। गांवड़ी गांव के एक युवक ने, जिसने पहले मछलीपालन की आमदनी से अपना कच्चा मकान बनवा लिया है, बताया कि इस साल उसे केवल दो-तीन किलो मछली मिली हैं जबकि पिछले साल 20-30 किलो मछली मिलती थीं। यही बात कुछ अन्य गांवों के लोगों ने बताई।

राजस्थान में कुल मिलाकर लगभग 20 हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र ऐसा है जहां आदिवासियों की जनसंख्या 50 प्रतिशत से ज्यादा है और जहां आदिवासी उपयोजना के अन्तर्गत काम हो रहे हैं। ये क्षेत्र राज्य के बांसवाड़ा और डुंगरपुर में पूर्णतया और उदयपुर, चित्तौड़ और सिरोही जिलों में आंशिक रूपसे आते हैं तथा ऐसे करीब 4480 गांव हैं। कुल मिलाकर इस क्षेत्र में आदिवासियों की जनसंख्या कुल जनसंख्या का लगभग 65 प्रतिशत है। इसके अलावा 36 अन्य आदिवासी अंचल भी हैं जिनमें 10 हजार से अधिक आदिवासी जनसंख्या निवास करती है। राजस्थान भारत के पांच जनजाति बहुल राज्यों

सहकारी समिति के प्रशिक्षक आदिवासी युवकों को बीड़ी बनाने का प्रशिक्षण देते हुए

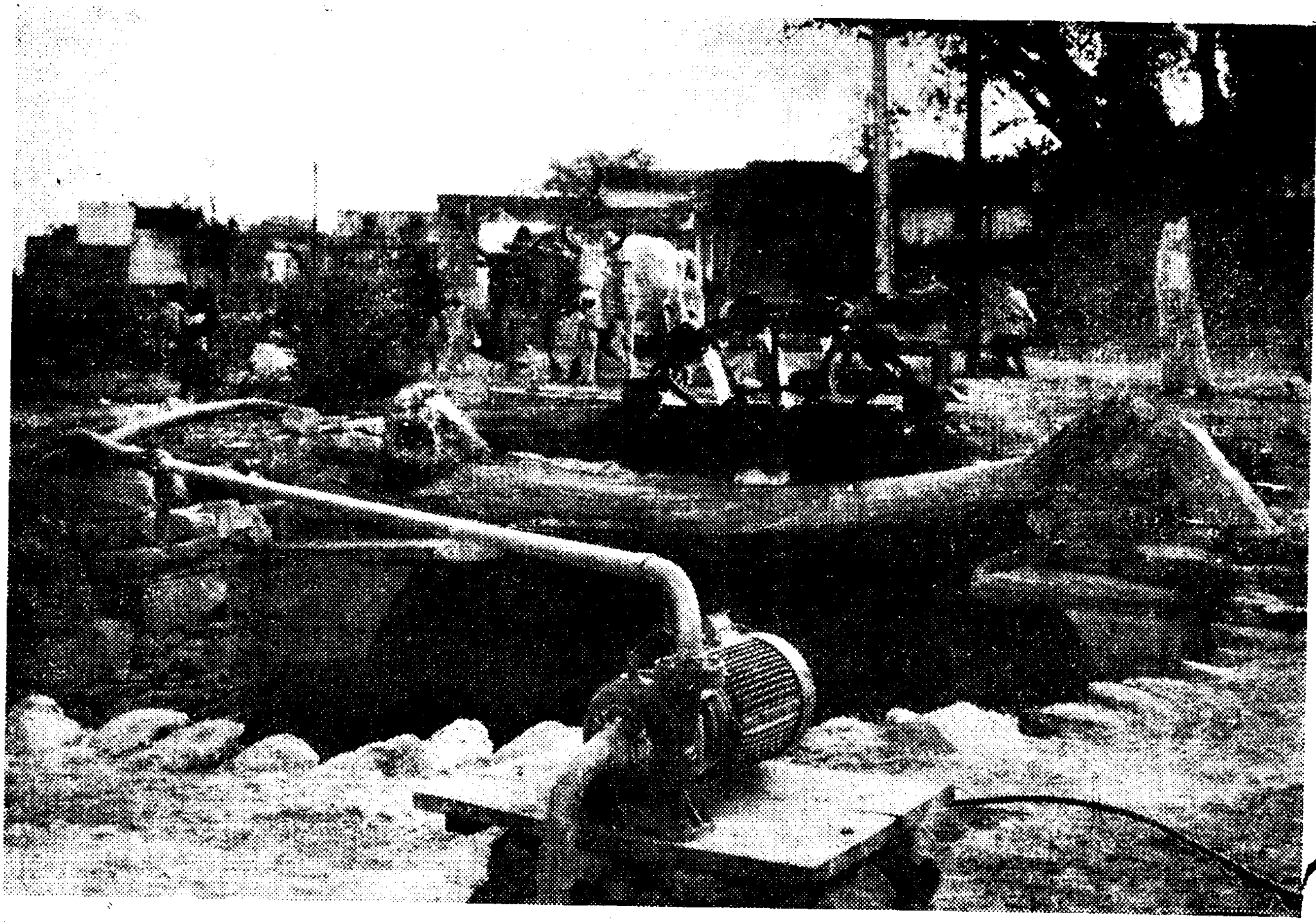

अनेक कुओं में परम्परागत रहट के साथ डीजल पम्प भी लग गए हैं

मे है । यहा रहने वाले प्रमुख जनजातियों में भील, मीणा, डामोर, करासिया एवं सहरिया हैं । भील जनजाति इन सबमें बहु-संख्यक है । भील राजस्थान के ही नहीं समस्त देश की तीन प्रमुख जनजातियों में से हैं और ये सबसे प्राचीन निवासी माने जाते हैं और लोग नदियों के साथ बने गांव में रहते हैं । जनजाति विकास उप-योजना के अंतर्गत किए जा रहे कार्यक्रमों के फलस्वरूप आदिवासियों के जीवन में परिवर्तन आने लगा है । भूमि सुधार, कृषि, वन, सिंचाई, बिजली, सड़कें, शिक्षा, चिकित्सा, पेय-जल और सामाजिक कल्याण के कार्यक्रमों के फलस्वरूप अब स्थिति सुधरती जा रही है । जिन कार्यक्रमों से जनजातियों को लाभ पहुंच रहा है और जिनके लिए शतप्रतिशत अनुदान मिला है जैसे कि फल और वितरण, कुएं गहरे करना, विद्युतीकरण, सहकारी समिति की सदस्यता, छात्र-छात्राओं के लिए पुस्तकें और वजीफे की व्यवस्था । गरीबी और पशुपालन संबंधी कार्यक्रमों में उन्हें 50 प्रतिशत अनुदान है । आदिवासी, सामाजिक वानिकी से लाभान्वित हो रहे हैं । हर परिवार को 100 पौधे मुफ्त दिए जा रहे हैं । पहले साल 5 रुपये दूसरे साल 3 रुपये व तीसरे साल 2 रुपये प्रति पेड़ देखभाल के लिए दिया जाता है ।

रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करने के लिए कई तकनीकी प्रशिक्षण केन्द्र चलाए जा रहे हैं । उदयपुर में कंपाउन्डर व पशुपालन स्टाकमैन के प्रशिक्षण केन्द्र और बांसवाड़ा में नर्सों के प्रशिक्षण केन्द्र चल रहे हैं । बांसवाड़ा-डुंगरपुर, उदयपुर, आबू रोड, प्रतापगढ़ में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाएं चालाई जा रही हैं जिनमें आदिवासी युवक प्रशिक्षण ले रहे हैं ।

आदिमजातियों की स्थिति सुधारने के लिए जो कार्य राजस्थान में हो रहा है वैसा ही देश के 17 राज्यों और 2 केन्द्रशासित क्षेत्रों में हो रहा है जहां उपयोजना प्रणाली के अन्तर्गत लगभग 75 प्रतिशत जनसंख्या लाभान्वित हो रही है । पांचवीं योजना में जबकि पहली बार अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए उप योजना के तहत अलग से धन राशि की व्यवस्था करने की प्रक्रिया शुरू की गई थी पांचवीं योजना काल (1974—78) में 120 करोड़ रु० की विशेष केन्द्रीय सहायता समेत 644 करोड़ रु० का परिव्यय रखा गया था । उप-योजना पर अमल के लिए केन्द्रीय सरकार की ओर से विशेष केन्द्रीय सहायता दी जाती है । छठी योजना में जनजाति क्षेत्रों की उप-योजनाओं के विभिन्न कार्यक्रमों पर अमल करने के लिए 470 करोड़ रु० की केंद्रीय सहायता का प्रावधान किया गया है । एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत भी आदिवासी परिवारों के लिए विशिष्ट योजनाओं के अन्तर्गत सहायता दी जा रही है । □

गांवों के लोगों के लिए सन्तुलित पोषक आहार

* ब्रजलाल उनियाल

हमारे देश के, विशेषरूप से गांव के, लोगों में कुपोषण आम-तौर पर पाया जाता है और इसके जहां कई कारण हो सकते हैं वहां एक कारण तो निश्चित है कि लोगों में भोजन के पोषक तत्वों के बारे में जानकारी नहीं के बराबर है और बहुत-से लोग यह नहीं जानते कि संतुलित आहार है क्या और कैसे कम खर्च में सन्तुलित आहार लिया जा सकता है।

आधुनिक पोषण अनुसन्धान से इस बात का पता चला है कि बढ़-वार वाले बच्चों में कैलोरी प्रोटीन के न होने से अनेक बुरे परिणाम देखने को मिले हैं। ये दुष्परिणाम प्रायः दिमागी कमजोरी की शक्ल में दिखाई देते हैं। कभी-कभी तो इस हानि का कोई उपाय भी नहीं होता।

सन्तुलित आहार का मतलब है क्या? यही न कि आप अच्छा खाना तो लें पर उसकी मात्रा भी ठीक हो और गुणवत्ता भी। अच्छे स्वास्थ्य के लिए संतुलित आहार बहुत जरूरी है। आहार में कई ऐसे पोषक तत्व होते हैं जिनसे मनुष्य स्वस्थ रहता है और शरीर को ऊर्जा मिलती है।

आहार और स्वास्थ्य का संबंध बहुत समय पहले ही मानव जान गया था। इसका व्यवस्थित और वैज्ञानिक अध्ययन भी समय-समय पर किया जाता रहा परन्तु वैज्ञानिक जानकारी के आधार पर इसका अध्ययन बाकायदा सन् 1918 में शुरू हुआ। सर राबर्ट केरिसन के नेतृत्व में पहले शाही आयोग ने पोषण अनुसंधान के औचित्य पर रिपोर्ट पेश की। पहले भी हमारे शास्त्रों में आहार के बारे में बहुत कुछ कहा गया है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में भी भोजन के वैज्ञानिक पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि भोजन में मनुष्य को तीन प्रमुख बातों का ध्यान रखना चाहिए। इन्हें शास्त्रकारों ने एक सूत्र में पिरो कर कहा है, "ऋतभुक, मितभुक, हितभुक" अर्थात सत्यता से अर्जित अन्न खाना चाहिए, भोजन ठूंस-ठूंस कर न खाएं बल्कि नपा-तुला खाएं और साथ ही भोजन पौष्टिक हो, हितकारी हो यानी तामसिक आदि न हो। ये बातें तो मोटे तौर पर कही गई हैं परन्तु हमारे देश में भोजन की पोषकता की दिशा में कम ध्यान दिया गया है। देश की अनेक संस्थाओं के देश के अलग-अलग इलाकों के आहार-ढांचों का गहरा अध्ययन और सर्वेक्षण किया है और इन अध्ययनों में 'कम खर्च बालानशी' का ध्यान रखा गया है। उन सभी संस्थाओं ने जो निष्कर्ष निकाले हैं, उन्हें मोटे तौर पर इस प्रकार दर्शाया गया है:—

(1) हमारे देश के लोगों में भोजन में ऐसे आहार की कमी है जो कि रक्षी आहार कहलाते हैं। इनमें दाल, हरी पत्तियों वाले साग-सब्जियां और फल हैं।

(2) आमतौर पर लोगों का आहार अनाज है जैसे गेहूं, चावल, ज्वार, बाजरा, रागी आदि।

(3) **दूध की औसत खपत बहुत ही कम है। वास्तविक प्रति** व्यक्ति दूध की खपत केवल 130 ग्राम थी जो पिछले दिनों घटकर कुल 110 ग्राम रह गई। यह स्थिति शोचनीय है। औसत आहार के बारे में नीचे लिखी बातों का भी पता चला:—

(1) अधिकांश लोगों को और उनमें भी विशेष रूप से बच्चों को कैलोरी की अपेक्षित मात्रा नहीं मिलती। यह कमी 15–20 प्रतिशत तक आंकी गई है।

(2) मात्रा व गुण की दृष्टि से प्रोटीन की खपत भी अधिक संतोषजनक नहीं है।

(3) विटामिन "ए" की खपत कम है। इसका कारण यह है कि हमारे देशवासियों का भोजन प्रायः पौधों पर आधारित है।

(4) बच्चों, गर्भवती महिलाओं और बच्चे पालने वाली माताओं में 'लौह' और 'कैलिशयम' जैसे मुख्य खनिजों की खपत कम है। यह खपत वयस्कों के मामले में कुछ ठीक है।

(5) विटामिन 'बी' कम्पलैक्स की खपत भी कुछ ठीक है, परन्तु निम्न सामाजिक वर्ग में इसकी कमी पायी जाती है।

हमें यह जानना चाहिए कि अल्पपोषण का अथवा कुपोषण का हमारे देश की जनसंख्या पर क्या प्रभाव पड़ता है और इससे कितनी हानि होती है। नीचे दिए गए तथ्यों से इस दिशा में जानकारी मिलेगी:—

(1) महिलाओं में गर्भपात की दर लगभग 7 प्रतिशत है। इससे महिलाओं के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। और अन्य हानियां तो हैं ही।

(2) पैदा होते समय बच्चों का वजन सामान्य नहीं होता, अधिकांश बच्चों का भार कम होता है।

(3) बहुत से बच्चे पैदा होते ही और कुछ बच्चे बहुत छोटी उम्र में ही मर जाते हैं।

(4) बच्चे प्रायः अस्वस्थ व रोगी रहते हैं। स्कूल जाने योग्य उम्र के बच्चों में लगभग 2 प्रतिशत तक कैलोरी और प्रोटीन की कमी के लक्षण नजर आते हैं। इन्हें अंग्रेजी में क्वाशिओरकर व मरेस्मस कहते हैं।

(5) खून की कमी भी लोगों में पाई जाती है। मुख्यरूप से 'लौह' की कमी पाई जाती है। स्कूल जाने की उम्र से पहले के बच्चों में 70 प्रतिशत, गर्भवती स्त्रियों में 50-60 प्रतिशत और आम वयस्कों में 30 प्रतिशत कमी पाई जाती है।

(6) बच्चों में विटामिन 'ए' की कमी पाई जाती है। विटामिन 'ए' की कमी से आंखों की रोशनी कमजोर हो जाती है या अंधापन भी हो जाता है। बच्चों में इसकी सीमा 8 प्रतिशत तक है। हालत इतनी खराब हो गई है कि छोटे-छोटे बच्चों के भी चश्में चढ़ने शुरू हो गए हैं। अब भी कई बड़े-बूढ़े 80 साल की उम्र में भी बिना चश्में के पढ़ लेते हैं। निश्चय ही विटामिन 'ए' की बहुत लोगों में कमी है।

(7) भिन्न-भिन्न इलाकों में कुछ खास कारणों से यानी कुछ विशेष आहार अथवा अन्य कारणों से विकार पाए जाते हैं। दक्षिण भारत में पैलाग्रा, मध्यभारत में लेथिरिक्त, हिमालय के निचले इलाकों में, मराठवाड़ा व मध्य प्रदेश में गलगंड रोग पाया जाता है।

आहार में मुख्यतः कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा और तेल पोषक तत्व होते हैं। ये तत्व पोषण के लिए अनिवार्य हैं। प्रोटीन से शरीर का निर्माण होता है, शरीर के ऊतक और मांसपेशियां बनने में मदद मिलती है। वसा ऊर्जा का स्रोत है। इसलिए कार्बोहाइड्रेट शरीर को ऊर्जा देता है। विटामिन 'ए' चमड़ी और नसों को स्वस्थ रखता है। आंखों की ज्योति की रक्षा करता है। विटामिन 'बी' भूख बढ़ाता है, पाचन में मदद करता है, स्नायुतन्त्र को स्वस्थ रखता है।

नीचे दी गई तालिकाओं में संतुलित आहार की मात्राएं दी गई हैं :—

(ग्राम में)

	हल्का काम करने वाले		सामान्य काम करने वाले		भारी काम करने वाले	
	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
अनाज .	460	410	520	440	670	575
दालें .	40	40	50	45	60	50
पत्तीदार सब्जियां	40	100	40	100	40	50
दूसरी सब्जियां	60	40	70	40	80	100
कन्द व मूल .	50	50	60	50	80	60
दूध .	150	100	200	150	250	200
तेल व वसा .	40	20	45	25	65	40
चीनी आदि .	30	20	35	20	55	40

*विभिन्न आयु वर्गों के लड़के लड़कियों के लिए सन्तुलित आहार की मात्राएं नीचे दी गई हैं :—

	छोटे शिशु		लड़के	लड़कियां
	1–3 साल	4–6 साल	10–12 साल	10–12 साल
	(ग्रामों में मात्रा)			
अनाज . .	175	270	420	380
दालें . .	35	35	45	45
पत्तीदार सब्जियां	40	50	50	50
दूसरी सब्जियां	20	30	50	50
कन्द व मूल .	10	20	30	30
दूध . .	300	250	250	250
तेल व वसा .	15	25	40	35
चीनी आदि .	30	40	45	45

*स्रोत : फैक्ट्स एबाउट अवर डाईट-फूड एण्ड न्यूट्रीशन बोर्ड, कृषि मंत्रालय, नई दिल्ली।

उपज की दिशा में कुछ सिफारिशें

राष्ट्रीय कृषि आयोग ने कुछ सिफारिशें की हैं तथा विज्ञान व टैक्नोलाजी राष्ट्रीय समिति ने पोषण के लिए एक टास्क फोर्स बनाई थी। उसने भी देश की पोषण की कम से कम आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कुछ सिफारिशें की हैं जिन्हें नीचे दिया गया है:—

(1) जिन फसलों से अधिक पोषण मिलता है उनकी उपज में वृद्धि की जाए। अधिक उपज देने वाली किस्मों से हमारी उपज में काफी वृद्धि तो हुई है पर इस वृद्धि की दर कायम रखी जाए। इनमें गेहूं, धान, ज्वार, बाजरा आदि फसलें शामिल हैं।

(2) दालों से हमें काफी प्रोटीन मिलता है। जो लोग मांस नहीं खाते उनके लिए प्रोटीन का बढ़िया स्रोत दालें हैं। अतः दालों का उत्पादन बढ़ाया जाए। हमारा उत्पादन घटा है।

(3) अब तक इस्तेमाल किए जाने वाले परम्परागत तेलों का उत्पादन तो बढ़ाया ही जाए पर साथ ही साथ तेलों के नए स्रोतों का भी पता लगाया जाए। इस समय हमारे देश में तेल तथा वसा की खपत लगभग 11 ग्राम प्रतिदिन प्रति वयस्क है जबकि पोषण की दृष्टि से कम से कम एक व्यक्ति को प्रतिदिन 30 ग्राम मिलना चाहिए। कहने का मतलब यह है कि अभी हमें तेल की उपलब्धता को लगभग तीन गुणा करना है।

(4) सामान्य सब्जियों, हरी पत्तीदार सब्जियों, जड़ों व कन्दों व सस्ते मौसमी फलों के उत्पादन में विशेष प्रयत्न किए जाने चाहिएं। इनकी अधिक खपत से दो फायदे हैं। एक तो लोगों के स्वास्थ्य में सुधार होगा और साथ ही अनाज की खपत किसी हद तक

कम होगी। हरी साग-सब्जियों, आम, पपीता आदि से विटामिन "ए" की कमी पूरी की जा सकती है।

(5) दूध का उत्पादन बढ़ाने, मुर्गी पालन व मछली पालन में तेजी लाने को उपयुक्त प्राथमिकता दी जाए।

इन सिफारिशों के साथ ही यह भी कहा गया है कि हमें अपनी फसलों में प्रोटीन, लाइसीन, कैरोटीन, कैल्शियम, लौह की मात्राएं बढ़ाने के प्रयत्न करने चाहिएं। दालों में मथिकोनिन अंश बढ़ाने का यत्न करना चाहिए। हमें ऐसी फसलों के विषय में सावधानी बरतनी चाहिये जिनमें विषैले या हानिकारक तत्व हों जैसे कि लैथाइरस सेटाइवस खेसरी की न्यूरोटोक्सिन वाली किस्में, बाजरे की अर्गट सन्दूषण वाली किस्में, मूंगफली की अफ्लोटोक्सिन संरक्षण वाली किस्में।

फसलों के पोषणमान

प्रोटीन, एमिनो अम्ल और खनिज घटकों की मात्रा से पोषण मान आंका जाता है। पोषण मानों का अध्ययन करने के उद्देश्य से विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों, भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद के संस्थानों और गृह विज्ञान महाविद्यालयों ने इस दिशा में काम किया। इन अध्ययनों से पता चला कि अधिक उपज देने वाली किस्में परम्परागत किस्मों की तुलना में पोषण की दृष्टि से किसी तरह भी कम नहीं है बल्कि इनमें पोषण तत्व कुछ अधिक ही हैं।

मक्का की "शक्ति" 'प्रोटीना' और 'रतन' किस्मों में अन्य किस्मों की अपेक्षा लाइसीन की मात्रा अधिक है।

अनुकूल सस्य विज्ञान और अच्छे पोषण की दृष्टि से फसलों की कुछ किस्में :—

फसल	किस्में
गेहूँ	कल्याण सोना, सोनालिका, शरबती, सोनोरा, हीरा, मोती, शेरा।
धान	आई० आर०-8, ए० डी० टी०-27, आई० आर० 48, जया, पदमा, हंसा, पंकज, जगन्नाथ, रतना।
मक्का	दक्कन, गंगा-5, गंगा-10, रंजीत। शक्ति, रतन, प्रोटीना, विक्रम, अम्बर, जवाहर, विजय, चन्दन, मोती।
बाजरा	एच० बी०-1, एच० बी०-2, एच० बी०-3, एच० बी०-4।
जौ	ज्योति, रत्ना, कैलाश।
मूंगफली	टी० एम० वी०-10, टी० एम० वी०-7, ज्योति, गौ जी०-1, गौ जी०-10, जे-11, एम०-13।
सोयाबीन	ब्रग, ली, अंकुर, पंजाब 11 हार्डी।

दालों का महत्व

हालांकि दुनिया भर में भारत में दालों की पैदावार सबसे अधिक है और अधिक प्रोटीन वाली दालों की किस्में भी बहुत हैं फिर भी दालों की पैदावार घट गई है। पहले प्रति व्यक्ति दाल की खपत 70 ग्राम थी जो कि अब घटकर कुल 50 ग्राम रह गई है। दरअसल, शाकाहारी लोगों में प्रोटीन का मुख्य स्रोत तो दाल ही है। इसलिए दालों की खपत पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। पर हमारे देश में उल्टी गंगा बह रही है। बहुत से लोगों ने अधिक उपज देने वाली अनाज की किस्में उन खेतों में उगाना शुरू कर दी हैं जहां पहले दालें उगाई जाती थीं। इस प्रकृति को रोकने की जरूरत है। दालों से तो मिट्टी की उर्वरा शक्ति भी बढ़ती है। राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद, द्वारा किए गए अनुसन्धान से पता चला है कि दालों का प्रयोग कम होने के कारण इसका देर में पकना व पचनीयता है। दालों की पचनीयता का सम्बन्ध कार्बोहाइड्रेट, पस, खासतौर से एमाइलोस अंश आदि से है। अन्य दालों की अपेक्षा मूंग की दाल जल्दी पचती है।

खाद्य तेल

पौधों से प्राप्त खाद्य तेलों की उपज बढ़ाने की तुरन्त आवश्यकता है। खाद्य तेल ऊर्जा के स्रोत तो हैं ही, ये बहु-असन्तृप्त वसा अम्लों के भी मुख्य स्रोत हैं। अनुमान है कि अच्छे स्वास्थ्य के लिए एक व्यस्क व्यक्ति को प्रतिदिन 5 ग्राम बहु-असंतृप्त वसा अम्ल की आवश्यकता होती है। इस अम्ल का मुख्य स्रोत है कुसुम या करडी। इस समय आमतौर पर हम मूंगफली, बिनौला, तिल, तोरिया, सरसों, नारियल का तेल इस्तेमाल करते हैं।

तिलहनों से हमें न केवल बहु-असंतृप्त वसा अम्ल मिलते हैं बल्कि इनका महत्व प्रोटीन के स्रोत के रूप में भी है। अब तक मूंगफली व बिनौले की खाद्य खली का उपयोग, अल्पपोषित बच्चों के पोषण के लिए पूरक आहार कार्यक्रमों में प्रोटीन के स्रोत के रूप में किया जाता रहा है। तेल रहित खली के प्रयोग में रुकावट डालने वाली कुछ मुख्य समस्याएं, मूंगफली में अफ्लोटोक्सिन, बिनौले में गौसिपोल और तोरिया, सरसों में एण्टी थाइराइड है। इन समस्याओं का काफी हद तक समाधान हो चुका है।

तेलों में नए स्रोतों के खोजने की काफी गुंजाइश है। अभी कुछ क्षेत्रों में काम करीब-करीब नहीं हुआ, इन पर काम होना चाहिए: ताड़ की गुठली, मेस्टा बीज, महुआ के बीज, जंगली बादाम आदि।

सागभाजी व फल

सब्जियों, फलों व इन से उपलब्ध विटामिनों व खनिजों पर विश्वसनीय आंकड़े तो उपलब्ध नहीं हैं। परन्तु मोटे तौर पर जो सूचनाएं उपलब्ध हैं उनके आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि हमारे देश में इनकी प्रति व्यक्ति खपत बहुत ही कम है। हमारा दृष्टिकोण अभी ज्यादा बढ़िया नहीं है। इसलिए जरूरत इस बात की है कि गांव-गांव में साग-सब्जियों व मौसमी फलों का महत्व समझाया जाए। फरासबीन, ग्वार, सेम, में अन्य सब्जियों की तुलना में प्रोटीन अधिक होता है यदि हमारे आहार में हरी साग-भाजियां, आम, पपीता, काफी

हो तो विटामिन 'ए' की कमी दूर हो जाएगी और इसकी कमी से होने वाले रोगों या लौहहीनता-जन्य रोगों से बचा जा सकता है। पोषण बागों का अभियान चलाया जाना चाहिए ताकि लोग अपने बागों में आम, पपीता, शरीफा, बेर, अमरूद, आंवला, मेवा, नींबू, वर्गीय फल जोकि पोषक हैं लगाकर फायदा उठा सकें। पालक, चौलाई, सहजन और खर्चीली दूसरी हरी पत्तियों वाली सब्जियां खूब उगाई जानी चाहिए।

शहरों की तरफ अंधी-दौड़

जरूरत इस बात की है कि गांवों के प्राकृतिक और प्राथमिक स्रोत गांवों से शहरों की तरफ अन्धाधुन्ध तरीके से ना जा पाएं। इसलिए गांवों में ऐसी तकनीकें अपनाई जानी चाहिएं ताकि गांव की प्राकृतिक सम्पदा का वहीं संसाधन व उपचार हो। वहां के लोगों को ज्यादा पैसा मिले, ज्यादा रोजगार मिल सके और शहरों की तरफ की अन्धी दौड़ कम हो। इन तकनीकों की लागत कम हो और ये सरल भी हों। धान ओसाई के अन्य तरीके, खाद्यों की पैकिंग, दाल दलने की उन्नत विधियां, तेल रहित खली को खाने के योग्य बनाने के संसाधन, बालाहार, रक्षा सेनाओं की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पहले से पके हुए खाने का संसाधन, मूंगफली की खली में अफलाटोक्सिन को दूर करने के उपचार आदि अनेक सफलताएं इस दिशा में केन्द्रीय खाद्य टे० अनु० सं० मैसूर व भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र बम्बई आदि संस्थाओं ने प्राप्त की हैं।

उपसंहार

कुछ क्षेत्रों में बहुत महत्वपूर्ण अनुसन्धान किए जा रहे हैं। जिनका उल्लेख यहां करना असंगत न होगा। ये क्षेत्र हैं: स्थानीय अनाजों, ज्वार-बाजरा से ऐसे व्यंजन तैयार करना जिनकी लागत तो कम हो पर जिनमें पोषण की मात्रा अधिक हो, स्कूल जाने से पहले की उम्र के बच्चों में पूरक खाद्य, दूध छुड़ाने वाले खाद्यों की स्वीकार्यता, पोषण मान का मूल्यांकन, मौसमी फलों का संसाधन व परिरक्षण, (इस विषय पर तो महिलाओं को दिए जाने वाला प्रशिक्षण बड़ा लोकप्रिय सिद्ध हुआ है), अचार डालना, शरबत बनाना, पापड़ व पपड़ियां तैयार करना आदि।

उक्त अनुसन्धानों का उद्देश्य केवल पोषण के प्रति जागरूकता ही पैदा करना नहीं है बल्कि स्थानीय कृषि उत्पादन तत्वों से ऐसी तकनीकों को अपनाना या उनका समावेश करना है जिसमें हमारे देश के लोगों के पोषण की आवश्यकताएं यथासंभव पूरी करने का प्रयत्न किया जा सके।□

के० 38, एफ-साकेत,
नई दिल्ली-110017

अपना भारत देश

खेतों में लहलहाती
ये गेहूं की सुनहरी बालियां
संदेश है

मानव के सुनहरे भविष्य का,
बागों से आती, आम के पेड़ों से
भीनी-भीनी सुगन्ध
गंध है

मोहब्बत के फूलों की,
पेड़ों पर कूकती कोयल,
घोलती है मधुर रस कानों में
जो कि प्रतीक है

जीवन के माधुर्य का
खेतो के करीब नदी में
बलखाती, लहराती, इठलाती
एक ही सरिता में बहती ये लहरें
संकेत है इन्सानियत के मिलाप का

खेत जोतते हलवाहे
पशु चराते चरवाहे
सबक है मानव के लिये
परिश्रम का

अहसास होता है
ग्राम्य जीवन के छोर-छोर से
आती है महक एक प्रेरणा की
एक सबक की

और ये सब
स्पन्दित करता है, स्पर्श करता है
हृदय को और
इस स्पर्श के टकराव से उत्पन्न
प्रतिध्वनि में
सदा यही गूंजता है
अपना भारत देश
कहां, वह बसा
हमारे गांवों में।

राज ठाकुर "सागर"
मकान नं० 2/126,
नकुल गली,
विश्वास नगर,
शाहदरा, दिल्ली-32।

परिवार कल्याण : कुरान शरीफ की रोशनी में ※ शहुद आलम शहुद

आज बढ़ती आबादी की समस्या हमारे लिए दर्दसर बन गयी है। भारत ही हीं, सम्पूर्ण विश्व इस समस्या के समाधान उलझा हुआ है। परिवार कल्याण कार्य- ही इस समस्या का एकमात्र हल है सके अपनाने से बढ़ती हुई आबादी पर नियंत्रण किया जा सकता है। इस कार्य-क्रम को सफल बनाना हम सभी का कर्त्तव्य है लेकिन कुछ लोग इसमें धर्म की आड़ लेते हैं और परिवार नियोजन को इस्लाम धर्म के खिलाफ बताते हैं। ऐसे लोगों का कहना है कि इस्लाम में परिवार नियोजन की इजाजत नहीं है। लेकिन इस धर्म के धर्म-ग्रन्थ "कुरान शरीफ" की आयतों को व्यापक संदर्भों से जोड़कर देखें तो यह साबित गा कि यह महान धर्म-ग्रन्थ इस संबंध में भी व्यवधान नहीं खड़ा करता और ने अनुयायियों को आज के संदर्भों में होकर रहने की शिक्षा नहीं देता। जब 10 दिसम्बर, 1966 को ने बढ़ती हुई आबादी की रोक- र एक बयान जारी किया तो उस यान पर 6 मुस्लिम देशों के शासनाध्यक्षों ने हस्ताक्षर किए थे। इनमें ईरान के भूत-पूर्व स्व० शाह रजा पहलवी, मलयेशिया के प्रधान मंत्री तंकु अब्दुल रहमान और मिस्र के भूतपूर्व राष्ट्रपति स्व० जमाल अब्दुल नासिर भी शामिल थे।

मलयेशिया की राजधानी कुआलालम्पुर में 19 अप्रैल, 1969 को जब अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी सम्मेलन का आयोजन हुआ था तो उस सम्मेलन में विश्व के इस्लामी देशों के लिए परिवार कल्याण कार्यक्रम को सरकारी कार्यक्रम के तौर पर अपनाने का निर्णय लिया गया था। इस निर्णय के पक्ष में अपना फतवा देते हुए जार्डन के मुफती आजम ने कहा था, "हम खानदानी मंसूबा बंदी के पक्ष में अपना फतवा देते हैं, क्योंकि इस्लाम इसकी मुमानियत नहीं करता है।" इस पत्तवे की पुष्टि अलाजहर विश्वविद्यालय (काहिरा) के मजलिस-ए-पत्तवा ने भी की थी। वैसे इस निर्णय से पूर्व विश्व के कई मुस्लिम देशों ने परिवार नियोजन को अपनी सरकारी नीति में शामिल कर लिया था। तुर्की ने 1956 से, मिस्र, माराकस, त्युनस और मलयेशिया ने 1966 से, ईरान ने 1965 से और पाकिस्तान ने 1960 से इस कार्यक्रम को अपनाया था।

आइए, अब देखें "कुरान शरीफ" परिवार कल्याण के बारे में क्या कहता है। कुरान शरीफ में दर्ज है :—

"और जो तुम में मुजरद हैं, उनका निकाह कर दो।" (24:30) प्रस्तुत आयत में अल्ला अपने बंदे को शादी का हुक्म देता है यानि बंदे को गृहस्थ जीवन स्थापित करने का आदेश देता है। फिर कुरान शरीफ में एक जगह इस तरह कहा गया है :—

"और शादी से पहले मकान हासिल करो" (कु० श० 24:32) प्रस्तुत आयत में अल्ला बंदे को कहता है कि जब तक तुम या तुम्हारे बच्चे वयस्क न हो जाएं और उचित शिक्षा, पूर्ण ज्ञान तथा क गृहस्थ जीवन बिताने की उनमें त न आ जाएं, तब तक उनकी श ज मत करो।

इस्लाम धर्म परिवार को समाज की बुनियादी इकाई करार देता है। इसलिए इस्लाम में शादी को एक पवित्र समझौता माना जाता है। वैसे जो लोग ठौर-ठिकाने के बगैर शादी कर लेते हैं या कर देते हैं, वे गलती करते हैं। एक जगह कुरान करीम में इस तरह हरशाद हुआ है :—

"तुम्हारी औरतें तुम्हारी खेतियां हैं जब चाहो अपनी खेती में जाओ और अपने लिए कुछ अच्छे अमल भेजो, लेकिन सालेह और नेक औलाद की सूरत में। (कु० श० 25:364; 30:29; 2:223) फिर कुरान शरीफ में एक जगह इस तरह कहा गया है :

"मायें अपनी औलाद को पूरे दो साल दूध पिलाएं।" (कु० श० 2:223) फिर एक और जगह कुरान मजीद में इस तरह इरशाद हुआ है :—

"और जान लो तुम्हारे मालो-असबाव और तुम्हारे बच्चे तुम्हारे लिए आज-माइश हैं। अगर तुम अच्छे ढंग से इनकी देखभाल न कर सके तो समझ लो कि वह तुमको तबाही की तरफ ले जाएंगे या उनसे तुम्हारी मुहब्बत तुम्हें खुदा की राह से दूर कर देगी।" (8:28)

प्रस्तुत सभी आयतों से स्पष्ट रूप में यह प्रमाणित होता है कि बच्चों की उचित शिक्षा के बाद ही बच्चे आजमाइश पर पूरे उतर सकते हैं। अगर उनकी देखभाल ठीक ढंग से नहीं होगी तो यकीनन वे बच्चे अपने माता-पिता को तबाह कर सकते हैं। पहली आयत में जहां मर्द को अपनी बीवी से शारीरिक संबंध स्थापित करने को कहा गया है वहां दूसरी आयत में मां को अपने बच्चों को दो साल तक दूध पिलाने की ताकीद की गई है। साथ ही इस बात की ओर भी ध्यान दिया गया कि तुम औलाद नेक और सालेह पैदा करो। अगर तुम्हारी औलाद नेक और सालेह न हुई तो वह तुम्हारे लिए अजूबा बन जाएगी। कुरान करीम में एक जगह इस तरह भी कहा गया है :—

"और वह कहते हैं ऐ, मेरे रब हमें अपनी बीवियों और औलाद से आंख की ठंडक फरमा।" (25:640)

इस आयत से साफ जाहिर है कि औलाद आंखों की ठंडक उस समय हो सकती है जब वह गिनती में कम हो। चूंकि इस्लाम में शादी का मकजद महज बच्चे पैदा करना ही नहीं है, बल्कि उन बच्चों को उचित शिक्षा, अच्छी तरबीयत देना तथा उन्हें अच्छे आदमी बनाना है ताकि वह आगे चलकर मजहब (धर्म) मुल्क और कौम की सेवा कर सकें। पैगम्बर इस्लाम का फरमान है :—

"इल्म (शिक्षा) हासिल करो, ख्वाह इसके लिए तुम्हें चीन जाना पड़े।" इसलिए सभी माता-पिता का सर्वप्रथम कर्त्तव्य है कि वे अपनी औलाद को नेक और सालेह बनाएं तथा उसे उचित शिक्षा और अच्छी तरबीयत दें। इसके लिए बच्चों की संख्या सीमित होनी जरूरी है। कुरान शरीफ में एक जगह यूं कहा गया है :—

"जो गरीबी में ज्यादा बच्चे पैदा करके उन्हें जीते जी मुर्दों से बदतर बना देते हैं।" (65:15)

फिर एक जगह कुरान मजीद में इस तरह फरमाया गया है :—

"और अपनी औलाद को मुफलिसी की वजह से कत्ल (हत्या) न करो, हम तुमको भी रिजक देते हैं और उनको भी।" (कु० श० 6:131)

प्रस्तुत दोनों आयतों में स्पष्ट रूप से लियाकत के अनुसार बच्चा पैदा करने को कहा गया है। बहुत से लोग इस आयत का गर्भपात के विरोध में मतलब निकाल लेते हैं। लेकिन जहां तक उलेमाओं की राय है कि हत्या का प्रश्न उस समय पैदा होता है कि जब इन्सानी बच्चों की हत्या की जाए। परिवार नियोजन के तरीके का मकसद मात्र गर्भ रोकना है। इन्सानी हत्या नहीं।

इसी आयत की रोशनी में यह प्रमाणित होता है कि इस्लाम परिवार नियोजन की मुमानियत नहीं करता है। इस आयत में गर्भ गिराने की ओर भी साफ तौर पर इशारा किया गया है। परिवार नियोजन के अन्तर्गत डाक्टरी मदद से छः हफ्ते के अन्दर गर्भ गिराने की अनुमति है। चिकित्सा विज्ञान के अनुसार छः हफ्ते का गर्भमात्र गोश्त (मांस) का एक लोथड़ा होता है। उस समय तक वह इन्सानी रूप नहीं धारण करता है। इसलिए छः हफ्ते का गर्भ गिराना बच्चों की हत्या नहीं कही जा सकती है। इस प्रकार परिवार नियोजन के लिए गर्भपात भी इस्लाम विरोधी नहीं है। □

["हमारा घर" से साभार]

उधार खरीदे जो कांटे बोवे वो

राकेश कुमार अग्रवाल

समस्याएं और आदतें व्यक्ति को बन्धन में बांध देती हैं जिनमें फंस कर व्यक्ति अच्छे-बुरे को विवेक की कसौटी पर उतारने में असमर्थ रहता है। कुछ व्यक्ति आर्थिक समस्याओं का निवारण उधार की सुविधा में मान लेते हैं जो मृग मरीचिका की तरह समस्याओं की प्यास को और अधिक बढ़ा देती है।

अति प्राचीन काल में आवश्यकताएं सीमित होने के कारण मानव जीवन इतना जटिल न था। व्यक्ति अपनी आवश्यकता की वस्तुएं स्वयं उत्पन्न कर लेता था। सभ्यता के विकासक्रम में वस्तु विनिमय काफी लम्बे समय तक विनिमय व्यवस्था का आधार रहा है। कालान्तर में इस प्रणाली में अनेक कठिनाइयां पैदा हो गईं जिनको दूर करने के परिणामस्वरूप विनिमय माध्यम के रूप में मुद्रा का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। मुख्य रूप से मुद्रा विनिमय तथा वस्तु और सेवा के मूल्य मापक के रूप में कार्य करती है। साख-सृजन मुद्रा का एक गौण कार्य है क्योंकि यह व्यक्ति के स्वभाव से संचालित होती है। वर्तमान में लिया गया ऋण भविष्य में मुद्रा द्वारा सरलता से चुकाया जा सकता है। इस धारणा के कारण व्यावहारिक क्षेत्र में उधार लेन-देन को बल प्राप्त हुआ है।

उधार खरीद के दुष्परिणाम

- प्रारम्भ में उधार की आवश्यकता कालान्तर में आदत बन जाती है। फिर यही उधार खरीद की सुविधा सम्मोहन की भांति व्यक्ति को अपने वशीभूत कर लेती है। आर्थिक व मानसिक शोषण होने के बाद भी उपभोक्ता उधार खरीद से ही चिपका रहता है। अच्छे बुरे को समझने के लिए विवेक भी नष्ट हो जाता है। यह आदत उसको सब तरह से कमजोर बना देती है। उधार का तकाजा रहते वह स्वाभिमान शून्य हो पंगु बन[illegible] अपमान को सहता रहता है।
- मजबूरी की बात रहने दें अन्य[illegible] व्यक्ति आवश्कताओं को स्वयं [illegible] बढ़ा कर उनको पूरा करने क[illegible] सम्भव प्रयत्न करता है। भले[illegible] उसे ऐसा करने के लिए उधार [illegible] शरण में ही क्यों न आना पड़े। ऐसा करते समय वह इस सच्चाई को भूल जाता है कि 'उतने पांव पसारिये जितनी लम्बी सौर' फिर किसी भी छोटे से छोटे अवसर पर भी अतिरिक्त व्यय के लिए उधार का द्वार खुल जाता है किन्तु भविष्य तंगी से ग्रसित रहता है।
- 'उधार का खाना, फूस का तापना' स्वभाव से दोनों अस्थायी होने के कारण समान हैं। शादी-त्योहारों व रीति-रिवाजों के मौकों पर प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए उधार का पहाड़ खड़ा करने वाले उक्त कहावत झुठला देते हैं जिससे उनके भविष्य की आकांक्षाएं राख बन जाती हैं।
- उधार की समृद्धि निश्चित ही महंगी पड़ती है क्योंकि व्यक्ति इसके प्रभाव

में मादक पदार्थ के नशे की भांति थोड़े समय के लिए राजा बन जाता है, किन्तु जल्द ही वास्तविकता सामने आ जाती है। धीरे-धीरे वह आर्थिक दृष्टि से खोखला बनता चला जाता।

- उधार व्यापार का अनिवार्य अंग बनता जा रहा है। अधिकतम लाभ कमाने के उद्देश्य से बिक्रेता ग्राहक को स्थायी बना कर मन चाहा शोषण करने के लिए उसे उधार के मीठे जहर का चस्का लगा देता है। उपभोक्ता उसके प्रभाव में उधार की खामियों को नजरअन्दाज कर जाता है और उधार खरीद कर जाने-अनजाने स्वयं को ठगाता रहता है। साधारणतया उधार खरीद के कारण अपेक्षाकृत घटिया किस्म की वस्तु ऊंचे मूल्य पर माप-तोल में भी कम प्राप्त होती है क्योंकि बिक्रेता उपभोक्ता की मजबूरी को अच्छी तरह जानता है।
- उधार खरीद के कारण उपभोक्ता की प्रभुता समाप्त हो जाती है, फिर वह दुकानदार के हाथ की कठपुतली बन अपनी इच्छा के अनुरूप वस्तु खरीदने में असमर्थ रहता है।
- उधार के हिसाब-किताब में हेरा-फेरी के कारण अशिक्षित व्यक्तियों का अधिक शोषण होता है। भविष्य में उधार मिलता रहे इसलिए उसे बिक्रेता के हिसाब के अनुरूप ही उधार का भुगतान करना पड़ता है।
- वस्तु के अभाव की दशा में नकद खरीदने वाले से बचने पर ही उधार खरीदने वाले को वस्तु उपलब्ध होती है। इस दशा में उधार के कारण वस्तु न मिलने पर उधार उपभोक्ता को एक तरह से अपमान का सामना करना पड़ता है।
- उधार का भुगतान समय से करने में असमर्थ व्यक्ति को दुकानदार आगे वस्तु उधार देने में आनाकानी करता है। ऐसे में उधार खरीदने वाले उपभोक्ता को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में तो दुकानदार उधार पर ऊंचा ब्याज लेने के साथ भुगतान के समय सस्ते दामों पर फसल खरीद कर उपभोक्ता का बहुविधि शोषण करते हैं।
- उधार खरीद की सुविधा से 'ऋणं कृत्वा धृतं पिवेत्' के सिद्धान्त की प्रेरणा द्वारा अपव्यय को प्रोत्साहन मिलता है। व्यक्ति दुकानदार के अलावा, अन्य लोगों से भी उधार लेकर भोग करने लगता है। इसी क्रम में सर्विस वाला एडवान्स पर ही आश्रित रहता है।
- उधार को प्रेम की कैंची माना गया है। बहुत से लोग उधार लेकर उस दुकान पर ही आना छोड़ देते हैं। इसलिए कहा गया है—दिया उधार, गया खरीदार। इस स्थिति में कभी-कभी क्रेता और बिक्रेता के बीच संघर्ष की स्थिति पैदा हो जाती है।
- बहुत बार उधार के लालच में व्यक्ति कपटपूर्ण व्यवहार करना सीख जाता है, दूध वाले, होटल वाले, प्रेस वाले आदि सबके उधार को ट्रांसफर के मौके पर मार कर ले जाता है। बाद में लोग कोसते रह जाते हैं।
- उधार के कारण व्यक्ति की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाती है शर्म के कारण दुकानदार से आंख बचाकर निकलना पड़ता है। इसलिए किसी परिचित के सामने दुकानदार द्वारा किया जाने वाला उधार का तकाजा निःसंदेह अत्यधिक कष्ट पहुंचाता है। दुकानदार भी तो ऐसे अवसर की तलाश में रहता है। वह जानता है गर्म लोहे पर चोट का परिणाम अच्छा ही होता है। उपभोक्ता भले ही मन मसोस कर रह जाए।

उधार खरीद की आदत अभिशाप बन कर व्यक्ति की साख को गिरा देती है। फिर भी साधारण उपभोक्ताओं का एक बड़ा वर्ग उधार खरीदने का आदी होता है जो दुकानदार द्वारा शोषण किए जाने के बाद भी उसकी दया पर निर्भर करता है और उधार की सुविधा के धरातल पर फूलों की चाह में सिर्फ कांटे ही पाता है। इन कांटों से बचने का सरल मार्ग है कम खाये गर्म खाये। आवश्यकताओं को आय की सीमा में बांध कर रखने से उधार के बीज बोने से छुटकारा मिल सकता है। शुक्रनीति में इसीलिए सचेत किया गया है।

ऋणशेषं, रोगशेषं, शत्रुशेषं न रक्षयेत्।

ऋण, रोग और शत्रु को निर्मूल नष्ट कर दें। भविष्य में ये कष्ट पहुंचाते हैं।

राकेश कुमार अग्रवाल,
पोस्ट ग्रेजुएट डिपार्टमेन्ट आफ कामर्स,
एस० एस० वी० कालेज,
नेहरू गेट, बुर्ज मौहल्ला,
हापुड़ (उ० प्र०)

तेल की हर बूंद कीमती है, इसे बचाइए !

महाराष्ट्र में खरीफ के मौसम में कृषि उत्पादन

कृषि उद्योग का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्रीय आय का आधा भाग अकेले कृषि से ही प्राप्त होता है। कृषि प्रौद्योगिकी के स्थानान्तरण में जनसंचार के साधनों की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। महाराष्ट्र सरकार ने इस वर्ष खरीफ के मौसम में लगभग 34.59 लाख टन कृषि उत्पादन की योजना तैयार की है। छठी योजना में खाद्यान्न और तिलहन के उत्पादन बढ़ाने का लक्ष्य इतना रखा है जिससे राज्य इन वस्तुओं में आत्मनिर्भर हो सके। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बहु-फसली खेती को बढ़ावा दिया जाएगा। जिन क्षेत्रों में ऐसी फसलें उगाई जाएंगी, उनकी पहचान करनी होगी और खरीफ की शीघ्रता से बुआई और बहु-फसली खेती को ध्यान में रखते हुए विस्तार कार्यक्रम को अपनाया जाएगा।

खाद्य उत्पादन बढ़ाने के लिए जो नीति अपनाई जाएगी उसमें किसानों के लिए बढ़िया किस्म के बीज, उर्वरक, कीटनाशक, सिंचाई और ऋण सुविधाओं की पूर्ति पर बल दिया जाएगा। किसानों द्वारा योजना में उल्लिखित कृषि क्रियाएं अपनाने के लिए जरूरी है कि विस्तार की प्रशिक्षण और दौरा प्रणाली को काम में लाया जाए। विद्यालय और ऐसे ही अन्य संगठन महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इन सभी अभिकरणों के सम्मिलित प्रयास जरूरी हैं।

राज्य के कुल उत्पादन में दालों का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है। इस तरह खाद्यान्नों में दालों के स्थान को ध्यान में रखते हुए 1982–83 के खरीफ के मौसम में दालों के उत्पादन का लक्ष्य इस प्रकार है :—

क्रम संख्या	फसल	क्षेत्र (लाख हेक्टेयर में)	उत्पादन (लाख टनों में)
1.	तूर	6.74	4.87
2.	मूंग	5.48	2.28
3.	उड़द	4.55	1.59
4.	अन्य दालें	4.30	1.30
	कुल खरीफ दालें	21.07	10.04

1982-83 के खरीफ के मौसम के लिए प्रस्तावित लक्ष्य इस प्रकार है :—

क्रम संख्या	फसल	क्षेत्र (लाख हेक्टेयर में)	क्षेत्र के अन्तर्गत: संकर	क्षेत्र के अन्तर्गत: अधिक उपज देने वाली किस्में	उत्पादन (लाख टनों में)
1	2	3	4	5	6
1.	चावल	14.70	—	11.01	23.69
2.	ज्वार	28.50	19.50 +	3.64—23.14	38.13
3.	बाजरा	16.50	8.00	—	9.00
4.	अन्य खाद्यान्न	4.50	0.60	—	3.74
	कुल खरीफ खाद्यान्न	64.20	28.10 +	14.65=42.75	74.56

इस कार्यक्रम में विभिन्न अभिकरणों द्वारा विभिन्न आदानों की पूर्ति की भी योजना है। इन अभिकरणों में कमांड क्षेत्र विकास प्राधिकरण, महाराष्ट्र कृषि उद्योग विकास निगम, महाराष्ट्र राज्य सहकारी विपणन संघ आदि शामिल हैं। कृषि उत्पादन कार्यक्रम में कृषि विभाग, जिला परिषद, सिंचाई विद्युत विभाग, सहकारी विभाग, कृषि विश्व-

इस प्रकार क्षेत्र के हिसाब से खाद्य उत्पादन का लक्ष्य 85.27 लाख हेक्टेयर है जिसमें से 28.10 लाख हेक्टेयर में संकर फसलों और 14.65 लाख हेक्टेयर में अधिक उत्पादन देने वाली किस्मों की खेती की जाएगी। इससे उत्पादन 84.59 लाख टन होगा।

(शेष पृष्ठ 29 पर)

सहकारी क्षेत्र में चीनी उत्पादन को अधिक प्रोत्साहन दिया जाए

आर० सी० भटनागर ✱ टी० आर० सिंह

चीनी उत्पन्न करने वाले देशों में भारत का दूसरा एवं गन्ना उत्पन्न करने वाले देशों में भारत का पहला स्थान है। इस समय देश में 350 चीनी मिलें कार्य कर रही हैं, जिनमें दो लाख से अधिक श्रमिकों को प्रत्यक्ष रोज़गार की सुविधाएं उपलब्ध हैं। गन्ने के उत्पादन में लगे दो करोड़ से अधिक काश्तकार भी परोक्ष रूप से, काफी सीमा तक, इसी उद्योग पर आश्रित हैं। इस उद्योग में 500 करोड़ रुपये की पूंजी विनियोजित है और भारत के संगठित उद्योगों में इसका तीसरा स्थान है।

भारत में चीनी उत्पादन की कहानी बीसवीं शताब्दी में प्रारम्भ हुई, जब सन् 1900 में पहली चीनी मिल की स्थापना का कार्य बिहार में सम्पन्न हुआ। उत्तर प्रदेश ने अनुकरण करते हुए 1904 में दूसरी चीनी मिल की स्थापना कर दी परन्तु 1932 तक इस उद्योग की प्रगति अत्यन्त धीमी रही और राष्ट्रीय उत्पादन केवल डेढ़ लाख टन प्रति वर्ष तक सीमित था। देश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमें राष्ट्रीय उत्पादन से चार गुणा अधिक मात्रा विदेशों से आयात करनी पड़ती थी। 1932 में सरकार ने इस उद्योग को संरक्षण देने का निश्चय किया और परिणाम यह हुआ कि अगले पांच वर्षों में (1932-37) चीनी मिलों की संख्या में 4 गुणा वृद्धि हुई और चीनी का उत्पादन एक लाख टन प्रति वर्ष से बढ़कर 10 लाख टन प्रति वर्ष हो गया। देश के विभाजन के समय भारत में 138 चीनी मिलें थीं।

स्वतन्त्रता के उपरान्त नियोजन के पहले पच्चीस वर्षों में मिलों की संख्या और चीनी उत्पादन की दृष्टि से यह उद्योग निरन्तर विकास की प्रवृत्ति दिखाता रहा है :—

वर्ष	चीनी मिलों की संख्या	वार्षिक उत्पादन (लाख टन)
1950-51	138	11.3
1977-78	287	64.57

इस अवधि के अन्तिम 6 वर्षों में (1971-72 से 1977-78) चीनी का उत्पादन 13 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से बढ़ा है जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय उत्पादन 31.08 लाख टन से बढ़कर 64.57 लाख टन हो गया। निश्चय ही यह वृद्धि उद्योग की आश्चर्यजनक प्रगति का प्रमाण थी। परन्तु इसके पश्चात् जहां एक ओर मिलों की संख्या में वृद्धि का क्रम तो जारी रहा हमारे लिए चीनी के उत्पादत् को स्थिर रखना सम्भव नहीं हो सका। इस तथ्य की पुष्टि सारिणी 1 से होती है :

सारिणी—1

वर्ष	मिलों की संख्या	चीनी उत्पादन (लाख टन)
1977-78	287	64.57
1978-79	298	58.42
1979-80	307	38.58
1980-81	325	52.00

आयात, निर्यात, राष्ट्रीय उपभोग एवं चीनी भण्डार

स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत को चीनी के आयात की आवश्यकता अनुभव नहीं हुई। पिछले पांच वर्षों में केवल दो वर्ष, 1979-80 तथा 1980-81 ऐसे रहे हैं, जिनमें हमें प्रति वर्ष लगभग 2 लाख टन चीनी का आयात करना पड़ा है परन्तु इसका उद्देश्य भी मुख्यतः चीनी भण्डारों का निर्माण करना ही था।

चीनी का निर्यात, तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष में प्रारम्भ हुआ और यद्यपि यह क्रम बाद के वर्षों में निरन्तर जारी रहा है, निर्यात की गई चीनी की मात्रा में परिवर्तन की प्रवृत्तियां प्रबल रही हैं। सर्वाधिक निर्यात 1977–78 में हुआ जब 9.67 लाख टन चीनी का निर्यात किया गया और सबसे कम निर्यात 1968–69 में हुआ जब केवल .79 लाख टन चीनी देश से बाहर भेजी जा सकी।

चीनी का राष्ट्रीय उपभोग जनसंख्या की वृद्धि तथा औसत व्यक्ति की क्रय-शक्ति में वृद्धि से प्रभावित हुआ है। 1965–66 में कुल राष्ट्रीय उपभोग 27.74 लाख टन था जो 1980–81 तक बढ़कर 52 लाख टन हो चुका था।

चीनी के उपभोग तथा निर्यात के उपरान्त अवशेष भण्डारों को अगले वर्ष की आवश्यकताओं हेतु, संग्रह कर लिया जाता है। सारिणी-2 में उत्पादन, उपभोग, निर्यात, आयात एवं अवशेष भण्डारों की स्थिति को समन्वित रूप से स्पष्ट किया गया है।

सारिणी—2

(लाख टनों में)

वर्ष	उत्पादन	आयात	कुल पूर्ति	उपभोग	निर्यात	अवशेष स्टाक
1965–66 (तृतीय योजना, अन्तिम वर्ष)	35.41	—	*42.91	27.74	4.30	11.87
1973–74 (चौथी योजना, अन्तिम वर्ष)	39.48	—	47.89	35.22	4.39	8.28
1978-79 . . . . (पांचवीं योजना, अन्तिम वर्ष)	58.42	—	91.31	62.09	8.36	20.86
1979-80	38.58	2.00	61.44	52.98	2.39	6.07
1980-81 . . . . (छठी योजना, पहला वर्ष)	52.00	1.80	59.82	52.00	—	7.82

*उत्पादन=35.41+पिछले वर्ष का स्टाक=7.50=कुल जोड़=42.91

उपर्युक्त आंकड़े यद्यपि एक निराशाजनक स्थिति के द्योतक नहीं हैं परन्तु पिछले कुछ वर्षों में चीनी के उत्पादन को स्थिर रखना हमारे लिए सम्भव नहीं हो सका। इस अनिश्चितता एवं अस्थिरता का प्रभाव चीनी के प्रचलित मूल्यों पर पड़ा है।

1970–71 में बम्बई के थोक बाजार में चीनी का भाव 184.17 रुपये प्रति क्विटल था जो 1980–81 में बढ़कर 732.37 रुपये प्रति क्विटल हो गया था। खुदरा बाजार में यह मूल्य 18 से 20 रुपये प्रति किलोग्राम तक पहुंच गए थे।

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि चीनी उत्पादन की अनिश्चितता ने देश में एक अस्थिरता का वातावरण तैयार किया हुआ है। वास्तव में एक शक्तिशाली, स्वस्थ एवं प्रगतिशील चीनी उद्योग की परिकल्पना उत्पादन की स्थिरता से ही सम्बद्ध है। इस अस्थिरता के संबंध में तीन तथ्य विचारणीय हैं :

1. चीनी का उत्पादन गन्ने की उपलब्ध मात्रा पर निर्भर करता है और यह मात्रा गन्ने के उत्पादन में प्रयुक्त क्षेत्रफल से प्रभावित होती है। इस संबंध में एक विचित्र बात यह है कि गन्ने की वर्तमान बाजार कीमत से अगले वर्ष का उत्पादन प्रभावित होता है। यदि एक वर्ष कीमतें ऊंची होंगी तो अगले वर्ष गन्ने का उत्पादन स्वयं बढ़ने की प्रवृत्ति दिखायेगा परन्तु उत्पादन की यह वृद्धि फिर कीमतों को गिराती है और उससे अगला वर्ष गन्ने के उत्पादन में फिर पिछड़ जाता है। कीमतें गन्ने के उत्पादन को प्रभावित करती हैं और गन्ने का उत्पादन कीमतों को प्रभावित करता है परन्तु गन्ने के उत्पादन में प्रयुक्त क्षेत्रफल और उसकी उत्पादित मात्रा का चीनी के उत्पादन पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है।

2. गुड़ के बाजार मूल्यों में अत्यधिक वृद्धि के कारण चीनी मिलों की अपेक्षा गुड़-निर्माण इकाईयां, गन्ना उत्पादकों को नकद एवं ऊंचा भुगतान देने के लिए तत्पर रहती हैं। अतः 50 प्रतिशत गन्ना खाण्डसारी एवं गुड़ के उत्पादन में प्रयुक्त किया जाने लगा है, जो चीनी के उत्पादन की वृद्धि के लिए निश्चय ही घातक है।

3. यह उद्योग मूल्य निर्धारण एवं वितरण की व्यवस्था के क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षों से सरकारी नियन्त्रण में रहा है। सरकार ने पूर्ण नियन्त्रण, आंशिक नियन्त्रण, विनियन्त्रण एवं पुननियंत्रण आदि की नीतियों को अपनाया है। इस समय चीनी मिलों को उत्पादन का 65 प्रतिशत भाग निर्धारित मूल्य पर सरकार को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिए उपलब्ध करना पड़ता है और शेष 35 प्रतिशत भाग वह खुले बाजार में बेचने के लिए स्वतन्त्र है। बीच-बीच में उद्योग के राष्ट्रीयकरण की चर्चा भी हो जाती है और इन सब बातों का उद्योग के विकास पर अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ता।

वर्ष 1981-82 : सम्भावनाएं

1980–81 में चीनी और गन्ने के ऊंचे मूल्यों का इस वर्ष गन्ना उत्पन्न करने वाले क्षेत्र पर अनुकूल प्रभाव पड़ा है। 1981–82 में 18 करोड़ टन गन्ना उत्पन्न होने की सम्भावना है जो पिछले वर्ष के मुकाबले में लगभग 2 करोड़ टन अधिक होगा। इसके द्वारा लगभग 65 लाख टन चीनी के उत्पादन लक्ष्य की पूर्ति सम्भव हो सकेगी। इस समय हमारी उत्पादन क्षमता केवल 63 लाख टन चीनी उत्पन्न करने तक सीमित है परन्तु 27 नई चीनी मिलें तथा 85 विस्तार योजनाएं तेजी से पूरी की जा रही हैं जिनके कारण हमारी उत्पादन क्षमता शीघ्र ही बढ़कर 76 लाख टन हो जाएगी।

सुझाव :

अनुमान यह है कि छठी योजना के अन्त तक देश को लगभग 76 लाख टन चीनी की आवश्यकता होगी, जिसके लिए 80 लाख टन

थापित उत्पादन क्षमता का होना आवश्यक है। वर्तमान अस्थिरता, अनिश्चितता एवं भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित सुझावों पर तेजी से अमल करना हितकर होगा :

1. पिछले वर्षों का अनुभव इस बात का प्रमाण है कि चीनी उद्योग के सम्बन्ध में सरकार की प्रतिक्रिया अस्थायी उपायों तक सीमित रही है। यह उचित होगा कि सरकार दीर्घकालीन समन्वित दृष्टिकोण के आधार पर एक नीति का निर्माण करे ताकि प्रशासन की दृढ़ता से उद्योग में स्थिरता उत्पन्न की जा सके।

2. चीनी की उत्पादन क्षमता एवं गुड़ तथा खाण्डसारी के उत्पादन में वृद्धि के कारण गन्ने की मांग में निरन्तर वृद्धि हो रही है। अतः यह आवश्यक है कि गन्ने के क्षेत्रफल में होने वाले परिवर्तनों को रोका जाए। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु गन्ने एवं चीनी के सम्बन्ध में एक विवेकपूर्ण मूल्य नीति का निर्माण आवश्यक है ताकि गन्ना उत्पादक निश्चित मात्रा में गन्ने का उत्पादन करते रहें और साथ ही चीनी मिलों के लिए यह सम्भव हो सके कि वह गन्ने का ऊंचा मूल्य देने के पश्चात भी अपने लाभ को कायम रख सकें।

3. भावी चीनी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए तथा चीनी उत्पादन क्षमता को बढ़ाने की दृष्टि से नई सहकारी उत्पादन इकाइयों की स्थापना आवश्यक है। 1982–83 से उत्पादन प्रारम्भ करने के लिए 10 नई इकाइयों को स्वीकृति प्रदान कर दी गई है। सहकारी क्षेत्र में चीनी उत्पादन को और अधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। साथ ही वर्तमान सहकारी इकाइयों की उत्पादन क्षमता के विस्तार पर भी बल देना हितकर होगा।

4. नई इकाइयों एवं लघु तथा मध्यम आकार की पुरानी इकाइयों को सुदृढ़ बनाने की दृष्टि से खुले बाजार में बेची जाने वाली चीनी के अनुपात में कुछ अधिक छूट देना लाभप्रद होगा।

5. चीनी के उत्पादन में परिवर्तनों को पूर्णतः समाप्त कर देना सम्भव नहीं। अतः यह आवश्यक है कि कम उत्पादन वाले वर्ष में संकट का सामना करने के लिए चीनी भण्डारों का निर्माण किया जाए। यदि 1976–77 तथा 1977–78 के असाधारण चीनी अतिरेक के वर्षों में सरकार ने चीनी के व्यापक भण्डारों का निर्माण कर लिया होता तो वर्तमान कष्टदायक परिस्थितियां सम्भवतः उत्पन्न ही न होतीं। कीमतों की वृद्धि वाले वर्ष में यह भण्डार चीनी की कमी को दूर कर कीमतों को नीचे ला सकते हैं और अधिक उत्पादन व नीची कीमतों वाले वर्ष में अतिरिक्त चीनी को भण्डारों में संग्रह कर कीमतों की गिरावट व आने वाले वर्ष में गन्ने के उत्पादन की कमी को रोक सकते हैं।

6. अन्त में यह भी आवश्यक है कि चीनी उद्योग स्वयं राष्ट्रीय आवश्यकताओं के प्रति जागरूक होकर एक रचनात्मक व्यावहारिक नीति का निर्माण करे। चीनी की नियमित पूर्ति का दायित्व उद्योग को ही सम्पन्न करना होगा। उपभोक्ताओं से अधिकाधिक कीमतों की मांग करने के स्थान पर उन्हें अपनी उत्पादन विधियों में सुधार करते हुए लागतों को कम करने का प्रयास करना चाहिए। लागतों की कमी, उप-पदार्थों का समुचित प्रयोग तथा गुड़ एवं खाण्डसारी उद्योग से बेहतर समन्वय द्वारा ही एक सुदृढ़ और प्रगतिशील चीनी उद्योग की परिकल्पना को साकार किया जा सकता है। □

प्रवक्ता, अर्थशास्त्र एवं समाजशास्त्र विभाग,
बी० एस० एम० (पोस्ट ग्रेजुएट) कालेज,
रुड़की-247667

महाराष्ट्र में खरीफ के मौसम में कृषि उत्पादन

योजना में तिलहन की फसलों का उत्पादन बढ़ाने का भी लक्ष्य है। इससे खाद्य तेलों की कमी को दूर किया जा सकेगा। आगामी खरीफ के मौसम में इनका फसलवार लक्ष्य इस प्रकार है :—

क्रम संख्या	फसल	क्षेत्र (लाख हेक्टेयर में)	उत्पादन (लाख टनों में)
1.	मूंगफली .	6.80	6.00
2.	सूरजमुखी .	1.50	0.83
3.	तिल . .	1.95	0.36
4.	अन्य तिलहन .	1.06	0.19
	कुल खरीफ तिलहन	11.31	7.38

(पृष्ठ 26 का शेषांश)

कपास एक महत्वपूर्ण नकदी फसलों में से है। राज्य में यह कपड़ा उद्योग के लिए कच्चा माल मुहैया करती है। इससे बहुमूल्य विदेशी मुद्रा भी प्राप्त होती है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ाने के लिए सघन प्रयास किए जा रहे हैं। आगामी खरीफ के मौसम में 25 लाख हेक्टेयर में कपास की खेती करने का लक्ष्य है। इससे 18.25 लाख गांठों का उत्पादन प्राप्त हो सकेगा।

प्रगति की समीक्षा करने तथा कमी दूर करने के लिए उचित और यथा समय कदम उठाने के ध्येय से जिला, डिवीजन और राज्य स्तर पर समितियां बनाई जाएंगी। समितियों में विभिन्न अभिकरणों के प्रतिनिधि शामिल होंगे। खरीफ के कृषि उत्पादन के लिए रेडियो, दूरदर्शन, समाचार पत्र, कृषि प्रकाशन, वृत्त चित्रों आदि के द्वारा प्रचार अभियान चलाया जाएगा। □

अनुवाद—राधे लाल

1982-83 की योजना में

सार्वजनिक क्षेत्र के लिए

21082 करोड़ रुपये की व्यवस्था

वार्षिक योजना 1982-83 में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 21082 करोड़ रुपए के परिव्यय की व्यवस्था की गई है। यह वर्ष 1981-82 की वार्षिक योजना के परिव्यय से 21 प्रतिशत अधिक है। संसाधनों के आबंटन में ऊर्जा, परिवहन और सिंचाई तथा इस्पात, उर्वरक और गैर-फेरस धातु जैसे महत्वपूर्ण उत्पादों को उपलब्ध कराने वाले उद्योगों की क्षमता को बढ़ाने को उच्च प्राथमिकता दी गई है।

ऊर्जा के महत्व और आयातित तेल पर से निर्भरता कम करने की आवश्यकता को देखते हुए इस क्षेत्र के लिए पिछली योजना की तुलना में लगभग 40 प्रतिशत परिव्यय बढ़ाया गया है। यह चालू वर्ष की सार्वजनिक क्षेत्र की योजना के कुल परिव्यय का 32 प्रतिशत है। परिवहन और सिंचाई के लिए परिव्यय क्रमशः 10 और 11 प्रतिशत बढ़ाया गया है। इन तीनों आधारभूत क्षेत्रों के लिए रखा गया परिव्यय वर्ष 1982-83 के कुल सार्वजनिक क्षेत्र परिव्यय का आधे से अधिक है।

चालू वार्षिक योजना में उन परियोजनाओं के शीघ्र पूरा किए जाने को उच्च प्राथमिकता दी जानी है जो कार्यान्वयन के अग्रिम चरण में हैं। नई परियोजनाएं चयनात्मक आधार पर आरम्भ की जाएंगी। वर्तमान क्षमता के अधिकतम उपयोग और उत्पादन और उत्पादकता को बढ़ाने पर भी जोर दिया जा रहा है।

चालू वार्षिक योजना में गरीबी मिटाने के कार्यक्रमों को एक महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी गई है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लिए पिछली वार्षिक योजना में निर्धारित 145 करोड़ रुपये के केन्द्रीय परिव्यय की तुलना में 1982-83 की योजना में यह परिव्यय बढ़ाकर 190 करोड़ रुपये कर दिया गया है। इतनी ही राशि की व्यवस्था राज्यों द्वारा की जाएगी। प्रत्येक खण्ड के लिए आठ लाख रुपये की व्यवस्था की जाएगी जबकि वर्ष 1981-82 के दौरान यह व्यवस्था 6 लाख रुपये की थी और इसे बैंकों तथा अन्य वित्तीय संस्थानों से प्राप्त ऋणों द्वारा पूरा किया जाएगा।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के लिए 190 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। यह कार्यक्रम पचास-पचास प्रतिशत के आधार पर केन्द्र प्रायोजित कार्यक्रम के रूप में कार्यान्वित किया जा रहा है।

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के लिए पिछली वार्षिक योजना में निर्धारित 1005 करोड़ रुपये के परिव्यय की तुलना में चालू वर्ष की योजना का परिव्यय बढ़ाकर 1121 करोड़ रुपये किया गया है। संशोधित 20 सूत्री कार्यक्रम में शामिल कार्यों जैसे समस्याग्रस्त गांवों को पेयजल की सप्लाई, ग्रामीण परिवारों को आवास के लिए जगह का आबंटन, गन्दी बस्तियों के वातावरण में सुधार, प्राथमिक और प्रौढ़ शिक्षा, गांवों के विद्युतीकरण पर विशेष जोर दिया जा रहा है।

लघु और ग्रामीण उद्योगों की उच्च रोजगार क्षमता को देखते हुए चालू वार्षिक योजना में इनके विकास पर भी जोर दिया जा रहा है। स्व-रोजगार के लिए ग्रामीण युवकों का प्रशिक्षण कार्यक्रम जारी रहेगा। व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा मार्ग-निर्देशन की योजनाओं को और सुदृढ़ करने तथा उन्हें व्यापक बनाने का प्रस्ताव है।

स्व-रोजगार को बढ़ावा देने और जिला जन-शक्ति योजना एवं रोजगार उत्पादन परिषदों की सहायता के लिए 1982-83 के दौरान 50 रोजगार कार्यालयों को सुदृढ़ किया जाएगा। दो राज्यों में रोजगार अधिकारियों के लिए एक त्वरित प्रशिक्षण कार्यक्रम पहले ही आरम्भ कर दिया गया है और शेष राज्यों द्वारा इसे चालू वार्षिक योजना के दौरान आरम्भ करने की सम्भावना है। □

केन्द्र के समाचार

ग्रीष्मकालीन मूंग की उपज

इस वर्ष ग्रीष्मकालीन मूंग का उत्पादन पिछले वर्ष के 3.84 लाख टन के उत्पादन के मुकाबले 5.7 लाख टन होने की संभावना है। इस वर्ष ग्रीष्म-कालीन मूंग की खेती का क्षेत्रफल 10.58 लाख हेक्टेयर है जबकि पिछले वर्ष वह 7.20 लाख हेक्टेयर था।

कृषि मंत्रालय द्वारा पहली बार, विभिन्न राज्यों में मूंग पैदा करने वाले किसानों को के–851 किस्म की मूंग के बीजों के 55,000 पैकट मुफ्त बांटे गए।

फलस्वरूप राज्य सरकारों ने व्यापक अभियान चलाए। उत्तर प्रदेश में ग्रीष्मकालीन मूंग की बुवाई का क्षेत्रफल पिछले वर्ष के 2.95 लाख हेक्टेयर से बढ़ा कर इस वर्ष 3.94 लाख हेक्टेयर कर दिया गया। बिहार में इस क्षेत्र की सीमा 1.2 लाख हेक्टेयर से दुगुनी अर्थात् 2.5 लाख हेक्टेयर हो गई। अन्य राज्यों में भी इसी प्रकार के अभियान सभी स्तरों पर चलाए गए।

रबी फसल की कटाई तथा खरीफ फसल की बुवाई के बीच गर्मियों में मूंग की खेती को लोकप्रिय बनाकर किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए इस समय खाली भूमि का सदुपयोग करने के प्रयास किए गए। इस वर्ष ग्रीष्मकाल के दौरान मूंग के उत्पादन को बढ़ाने के लिए एक अभियान आरम्भ किया गया।

गांवों में पेयजल की सप्लाई

भारत सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को पेयजल उपलब्ध कराने के चुनौती भरे कार्य के लिए विदेशी एजेंसियों का सहयोग प्राप्त किया है। "यूनि-सेफ", ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम में सहायता के रूप में खुदाई के आधुनिक सामान और उपकरण प्रदान कर रहा है। "यूनिसेफ" और अन्य एजेंसियों ने खुदाई के लिए लगभग 200 बर्मे सप्लाई किए हैं और ये बर्मे कई राज्य सरकारों को दे दिए गए हैं। इसके अलावा भारत सरकार द्वारा 1981–83 की अवधि के लिए स्वीकृत मास्टर प्लान के अन्तर्गत "यूनिसेफ" द्वारा खुदाई के अन्य उपकरण भी देने की आशा है।

"यूनिसेफ" ने एक नए हस्तचालित पम्प के विकास में भी सहायता की है जिसका नाम है—"इन्डिया मार्क इट"। इन हस्तचालित पम्पों के कुशल संचालन और रख-रखाव हेतु भी "यूनिसेफ" सहायता प्रदान कर रहा है।

वर्ष 1982–83 में लगभग 45000 गांवों में पेयजल सुविधाएं उपलब्ध कराने का लक्ष्य है। इस पर 388 करोड़ रु० से भी अधिक लागत आने का अनुमान है।

दस लाख परिवार लाभान्वित

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जो 20 सूत्री कार्यक्रम का एक अंग है, के अन्तर्गत 1980–81 के 6.6 लाख परिवारों की तुलना में, पिछले वर्ष लगभग दस लाख अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति परिवारों को लाभ पहुंचा है। इस कार्यक्रम में पिछले वर्ष काफी सुधार हुआ है। वर्ष 1981–82 के दौरान इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 28 लाख 30 हजार परिवारों को सहायता पहुंचाई गई जबकि 1980–81 में 27 लाख 90 हजार परिवार ही लाभान्वित हुए थे। बैंकों ने 1980–81 के 199 करोड़ रु० की तुलना में लाभ-भोगियों को 470 करोड़ रुपये के मियादी ऋण दिए। यह 1980–81 के मुकाबले 136 प्रतिशत अधिक थे। यह कार्यक्रम 1978–79 में 2300 प्रखंडों में आरम्भ किया गया था। इस समय यह देश के सभी 5011 प्रखंडों में लागू है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य बेहद गरीब परिवारों को मदद पहुंचाकर उनकी आय को गरीबी की रेखा से काफी ऊपर लाना है।

हरियल चारा—मन भर दूध

दुधारू पशुओं के लिए गर्मी के दिनों में चारे की समस्या काफी कठिन हो जाती है। यदि किसान उन्नत कृषि विधियां अपनाए और गर्मियों में चारे की फसल उगाए तो चारे की समस्या हल हो सकती है। मई से जुलाई तक 60–70 दिनों के समय में जब खेत खाली रहता है, किसानों को चाहिए कि वे गर्मियों के चारे की किस्मों को उगाए। इससे न केवल खाली खेत का ही सदुपयोग करेंगे बल्कि चारे की कमी के दिनों में पशुओं में दूध उत्पादन को कम करने से भी बचा सकते हैं।

इस समस्या को दूर करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के कई अनुसंधान संस्थानों के वैज्ञानिक उन्नत किस्म के चारे की खोज करने में प्रयत्नशील हैं और उन्होंने बहुत सारे चारे की किस्मों को विकसित किया है।

हरे चारे में लोबिया, ज्वार (सोरघम) तथा जई शामिल हैं। इनकी कई किस्में हैं।

निर्धन परिवारों के लिए आवास स्थल

निर्माण एवं आवास मंत्रालय के पास उपलब्ध नवीनतम जानकारी के अनुसार विभिन्न राज्यों में ग्रामीण क्षेत्रों के 86 लाख भूमिहीन मजदूर परिवारों को आवास स्थल दिए गए हैं। इनमें से 15.1 लाख परिवारों को मकान बनाने में सहायता प्रदान की गई है।

अनुमान है कि ऐसे भूमिहीन परिवारों जिनको आवास स्थल आवंटित किए जाने हैं, की कुल संख्या 1.45 करोड़ है। वर्ष 1985 तक इन सब परिवारों को आवास स्थल उपलब्ध करा

दिए जाने का प्रस्ताव है । इनमें से 35 लाख परिवारों को मकानों के निर्माण में सहायता दी जाएगी ।

वर्ष 1982-83 में 10.49 लाख परिवारों को आवास स्थल देने तथा 7 लाख परिवारों को मकान के निर्माण में सहायता देने का लक्ष्य रखा गया है । वर्ष 1982–83 में इस योजना के लिए 74.88 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

प्रधानमंत्री के 20 सूत्री कार्यक्रम में इस कार्यक्रम के शामिल होने के फलस्वरूप निर्माण तथा आवास मंत्रालय ने राज्यों से मुख्यमंत्रियों तथा मुख्य सचिवों के स्तर पर निर्धारित लक्ष्यों को पूर्ण रूप से प्राप्त करने को सुनिश्चित करने के लिए अपने प्रयासों में तेजी लाने के लिए राज्य सरकारों से आग्रह किया है । कुछ राज्यों ने इस कार्यक्रम को अधिक कारगर ढंग से लागू करने के उद्देश्य से विशेष कक्षों की स्थापना की है । इस मंत्रालय में भी निगरानी व्यवस्था को मजबूत किया गया है ।

खेती का कीट और रोगों से संरक्षण

वर्ष 1982–83 में कीट और रोग निगरानी कार्यक्रम के अन्तर्गत पांच लाख हेक्टेयर कृषि भूमि का संरक्षण किया जाएगा । यह क्षेत्रफल इस कार्यक्रम के अन्तर्गत संरक्षित क्षेत्रफल से अधिक है । इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कीटों और रोग की स्थिति पर निगरानी रखी जाती है और पौधों को बचाने के लिए उचित समय पर आवश्यक सहायता उपलब्ध कराई जाती है । कीटनाशक दवाइयों की वर्तमान मात्रा को 60.000 टन से बढ़ाकर 72.000 टन करने का भी प्रस्ताव है ।

यह घोषणा केन्द्रीय कृषि सचिव, श्री एस० पी० मुखर्जी ने यहां दसवें अखिल भारतीय पौध संरक्षण सम्मेलन में अपने भाषण के दौरान की । सम्मेलन में राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों, संबंधित केन्द्रीय विभागों, अनुसंधान संगठनों और कीटनाशक उद्योग के प्रतिनिधियों ने भाग लिया ।

श्री मुखर्जी ने कहा कि ये लक्ष्य नए 20 सूत्री आर्थिक कार्यक्रम और वर्तमान उत्पादकता वर्ष की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किए गए है ।

सचिव ने राज्यों के प्रतिनिधियों से पौध संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत केन्द्रीय क्षेत्र की विभिन्न योजनाओं के लिए दी जा रही सहायता का पूरा-पूरा इस्तेमाल करने का अनुरोध किया । उन्होंने कहा कि इन कीटनाशक दवाइयों का कुशल उपयोग करने और अच्छे किस्म की कीटनाशक दवाइयों की सप्लाई को सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न स्तरों पर पूर्णकालिक प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता है ।

श्री मुखर्जी ने कीटनाशक उद्योग से यह कहा है कि उद्योग को स्तर नियंत्रण के लिए उचित उपाय करने के साथ-साथ देश के विभिन्न भागों में उचित दर पर कीटनाशक दवाइयां उपलब्ध कराने के लिए भी उपाय करने चाहिए ।

खेसरी दाल स्वास्थ्य के लिए हानिकारक

खेसरी दाल देखने में अरहर की दाल जैसी ही होती है और पीसने पर उसका आटा बेसन जैसा होता है । यह लम्बे समय से दाल तथा अन्य खाद्यान्नों में मिलाकर बेची जाती रही है जिससे शरीर के नीचे के अंग मारे जाते हैं ।

तीन से पांच महीनों तक भोजन में लगभग 40 प्रतिशत खेसरी दाल खाने से शरीर के निचले अंगों में रोग उत्पन्न हो सकते हैं । इसीलिए बहुत से देशों में इसके उपयोग पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है । भारत में कुछ क्षेत्रों में भूमिहीन मजदूरों को काम के बदले खेसरी दाल मजदूरी के रूप में दी जाती है । खेसरी दाल की अरहर की दाल और बेसन में भी मिलावट कर दी जाती है । पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात राज्य खेसरी दाल के प्रमुख उत्पादक राज्य हैं । जिन राज्यों में खेसरी दाल पैदा नहीं होती उनमें भी इसका प्रयोग फैलता जा रहा है । सरकार खेसरी दाल की खेती वाले क्षेत्रों का सर्वेक्षण कर, इसके कुप्रभावों का अध्ययन कर रही है ताकि हानि रहित दाल के लिए प्रयास किए जा सकें । यदि यह सब संभव नहीं होता है तो खेसरी दाल की खेती करने और उसकी बाजार में बिक्री पर कानूनी प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है ।

गरीबों की गाय बकरी

गांवों की अर्थव्यवस्था में हम बकरी की उपेक्षा नहीं कर सकते । इस दृष्टि से बकरी पालने में कुछ भ्रांतियां फैली हुई हैं जिन्हें बकरी अनुसंधान संस्थान ने यहां स्पष्ट किया है :—

अगर किसान को गाय और बकरी में से एक का चुनाव करने के लिए कहा जाए तो किसान निश्चय ही बकरी रखना पसन्द करेगा क्योंकि बकरी बहुत सस्ती पड़ती है, इससे जल्दी और बेहतर लाभ मिलता है और इसकी देखभाल करना आसान है क्योंकि चारे के मामले में इसकी कोई खास रुचि नहीं है । यह केवल 18 महीने की आयु में बच्चा जनती है ।

इसके दूध से बू आने और कम पोषक होने की धारणा बिल्कुल निराधार है । बकरी का दूध गाय के दूध जैसा ही पौष्टिक होता है । कहना तो यह होगा कि यह अधिक समांगीकृत होता है । इसमें 3.5 प्रतिशत वसा होती है । दूसरे शब्दों में बकरी के दूध में वसा और प्रोटीन दोनों की मात्रा समान रूप से मौजूद होती है और गाय के दूध की तुलना में यह आसानी से पच भी जाता है । यह विशेष रूप से बच्चों के लिए अच्छा होता है । बकरी क्षयरोग प्रतिरोधी होती है और इससे क्षयरोग के जीवाणु मानव शरीर में नहीं पहुंचते जबकि गाय या भैंस के दूध से क्षयरोग के कीटाणु शरीर में प्रवेश कर सकते हैं यदि ये पशु क्षयरोग से पीड़ित हों ।

यदि बकरी की देखभाल ठीक ढंग से की जाए और उन्हें रेवड़ से अलग रखा जाए तो बकरी के दूध में कभी भी खास किस्म की महक नहीं आएगी । दूसरी बड़ी गलतफहमी यह है कि बकरियां सबसे ज्यादा हरी घास या हरियाली ही चरती हैं और अंधाधुंध हर तरह की हरियाली का सफाया करती हैं । अनुसंधान से इस बात का पक्का पता चला है कि यह धारणा गलत है । □

जंगल में मंगल

जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ खेती की जोत सीमा निरन्तर घटी है । आज कृषकों के पास छोटे-छोटे खेत हैं । विज्ञान, तकनीकी विकास से जहां कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है, वहां जोत-सीमा घटने से कृषकों का आर्थिक स्तर गिरा है । गरीबी की रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वालों में एक बड़ा भाग कृषकों का है ।

कृषि को बहु-फसलीय एवं बहूद्देश्यीय बनाया जा रहा है, परन्तु बहु-फसलीय कृषि के लिए अधिक संसाधन, सिंचाई सुविधा, अधिक श्रम की आवश्यकता है, जो साधारण कृषक नहीं जुटा पाता । अतः कृषकों को लाभ पहुंचाने में वन विभाग ने पहल की है । फार्म फोरेस्ट्री अर्थात् कृषि के साथ जंगल तथा जंगल से मंगल संभव है । शेल्टर बेल्ट मण्डल वन विभाग ने ऐसे पौधे तैयार किए हैं जो कृषि के साथ अतिरिक्त धन उपलब्ध कराएंगे । साथ ही कृषि के लिए आवश्यक रासायनिक खाद की मात्रा में कमी लाकर कृषकों के धन को बचाएंगे ।

देश में ईंधन की कमी हो गई, जंगल कट गए हैं, ग्रामीण व कृषक गोबर को जो एक अच्छा खाद है, जला रहे हैं । इस के निदान के लिए कृषकों की आवश्यकता को पूर्ण करने, शीघ्र ईंधन की उपलब्धि के लिए कृषि के साथ-साथ नए पेड़ों की खेती करने की सलाह दी जा रही है । साधारणतया आम, नीम, पीपल, शीशम, सागवान आदि कोई भी वृक्ष दस-पन्द्रह वर्ष से पहले इस योग्य नहीं होता कि उसका ईंधन या कृषकों की आवश्यकता हल, कल, बलीण्डों आदि की पूर्ति कर सके ।

खेत पर पेड़ लगाएं तो छाया होगी, छाया के नीचे अनाज पैदा नहीं होगा, पेड़ों पर चिड़ियां बैठेंगी, चिड़ियां फसल को खाएंगी, इन समस्याओं का इन पौधों ने स्वतः ही निराकरण कर दिया है । नए वृक्ष पैदावार [illegible] जमीन को सुधारने में सहायक, शीघ्र [illegible] समर्थ होते हैं ये पशुओं के लिए ऐसा [illegible]पलब्ध करते हैं जो खिलाने पर बल-[illegible] करते हैं, इन वृक्षों की खेती की जा [illegible] जिन्हें कल्पतरु की संज्ञा दी जाए तो [illegible]योक्ति नहीं होगी । ये हैं कूबबूल या सूबबूल, सेसबनिया तथा यूकिलिप्टस या सफेदा ।

आधुनिक कल्पतरु कूबबूल या सूबबूल जिसको अंग्रेजी में लोसीनियां के नाम से जाना जाता है, इसका पौधा लगाने से काश्तकार की ईंधन की समस्या, उसके चारे की समस्या को हल करेगा ही लेकिन उक्त पेड़ की जड़ में जो छोटी-छोटी गांठें होती हैं, वह नत्रजन स्थिरीकरण (फिक्सेशन) का कार्य करती हैं जिससे नत्रजन खाद की बचत होगी और जमीन सुधरेगी । कूबबूल एक वर्ष में 5 मीटर बढ़ जाता है । इसके पत्ते में 28 प्रतिशत प्रोटीन है जो खली का काम करता है तथा पत्ता बार-बार काट कर मवेशियों को खिलाया जा सकता है । इसके पत्ते अन्य चारे के साथ मिलाकर खिलाने से मवेशी का दूध भी बढ़ता है ।

इसी प्रकार के लाभों को देने वाला तथा तेजी से बढ़ने वाला एक और पौधा है जिसे सेसबेनिया कहते हैं ।

यूकिलिप्टस या सफेदा बहुत तेज बढ़ने वाला पौधा है जिसकी जड़ें जमीन में सीधी जाती हैं और जिसकी छाया जमीन पर नगण्य होती है । पांच वर्ष के पश्चात् इसकी लकड़ी बल्ली, बलीण्डा, डण्डे के काम आ सकती है । ईंधन के रूप में इसका उपयोग हो सकता है । पांच वर्ष में यह पांच इंच मोटा और चालीस फीट की ऊंचाई तक पहुंच जाता है । खेती की लू और सरदी की ठण्डी तेज हवाओं से रक्षा करता है । इसे खेत के चारों तरफ उगाने से तीन वर्ष बाद मेड़ का काम करता है तथा स्थायी हदबन्दी हो जाती है ।

फसल के साथ पेड़ों की खेती के लिए एक-एक मीटर (लगभग तीन-तीन फुट) की दूरी पर एक-एक फुट गहरे गड्ढे सीधी लाइन में खेत के सिरे से दूसरे सिरे तक खोद दें । इसी प्रकार दूसरी पंक्ति तीन से पांच मीटर की दूरी पर खोदें । यह क्रम उस समस्त खेत के हिस्से में किया जाना है जिसमें पौधे लगावें । इस प्रकार एक हेक्टेयर में दो हजार पौधे लग सकेंगे । पौधे शेल्टर वन विभाग निःशुल्क खेत पर उपलब्ध कराता है । पेड़ लगाने के लिए विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता । खेती का पानी एवं खाद देने से पौधों को अपने आप खाद व पानी मिल जाता है तथा पांच-पांच मीटर की कतारों में कृषक अपनी गेहूं, ज्वार, बाजरा, चना आदि फसल ले सकता है ।

यदि थोड़ी सी सावधानी रखी जाए तो 80 प्रतिशत पौधे जीवित रह जाते हैं । यदि एक पेड़ की पांच साल बाद न्यूनतम तीस रुपया भी कीमत आंकी जाए तो कृषक को भारी लाभ मिल सकता है । □

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित ।